वैश्वीकरण का अर्थ एवं स्वरूप

3.1 वैश्वीकरण का परिचय और इतिहास

आज का युग वैश्वीकरण का युग है। वैश्वीकरण का शब्दिक अर्थ "विश्व का एकीकरण" है। "वैश्वीकरण" का अन्य नाम भूमंडलीकरण, जगतीकरण, विश्वायन आदि है। पूरी दुनिया को एक नजरिये से देखने का प्रयास वैश्वीकरण है। लेकिन आज पूरी दुनिया एक बाजार में बदलती जा रही है। सारी चीजें बेचने योग्य माल मात्र रह गयी हैं। वैश्वीकरण आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, पारिवारिक, धार्मिक परिवर्तनों का केन्द्रीकृत है।

अनिवार्य मजबूरी है, यह आज के मानव–जीवन की सबसे बड़ी चुनौती है। जीवन के हर क्षेत्र में इसका दखल है। मानव के समस्त क्रिया–व्यापार में वैश्वीकरण के तत्व पाये जाते हैं। सांस्कृतिक एवं साहित्यिक जगत में इसका प्रभाव अधिक है। कोई इससे दूर नहीं रह सकता। विकसित, अविकसित और विकासशील देशों पर भिन्न–भिन्न ढंग से इसका प्रभाव पड़ा है। न चाहकर भी विकासशील देशों को या तीसरी दुनिया को इसे मजबूरन स्वीकार करना पड़ता है। यह राष्ट्र–राज्य को कमजोर करनेवाला नवपूँजीवादी साम्राज्यवादी है। बाजार केन्द्रित विश्वग्राम का कहाना करके यह विश्व भर में अपना वर्चस्व पैदा करता है।

"वैश्वीकरण या भूमंडलीकरण का प्रभाव दुनिया पर जोरों पर है। अपनी औद्योगिक उत्पादों केलिए मंडी की खोज में निकली शक्तियाँ फिर उक्त मंडी की स्थिरता की करतूतों में लगी रहीं। इन शक्तियों ने प्रत्येक देश को लूटना शुरू किया। प्रस्तुत देशों की निजी संस्कृति को, सामाजिक व्यवस्था को तोड़ने में हिचकती नहीं।"....1 यह व्यवस्था सारे संसार को कुछ संशक्त पूँजीवादी संस्थाओं यानि बहुदेशीय कंपनियों और उनके सबल केन्द्र अमेरिका के हितों की रक्षा का माध्यम बनी हुई है। यह सिर्फ व्यापार केलिए दुनिया को एक सूत्र में बान्धना चाहती है।

वैश्वीकरण तो एक विश्व अर्थतंत्र का निर्माण है। यह विश्व अर्थतंत्र और विश्व बाजार के निर्माण में प्रत्येक राष्ट्र को जुड़ना होगा। आज जब स्वतंत्र व्यापार की बात होती है उसकी एकमात्र अर्थ होता है सशक्त व्यापारिक संस्थाओं केलिए उन सारे क्षेत्रों को खोल देना जो अब तक इनकी पहुँच के बाहर है। शोषण का नया ढाँचा है वैश्वीकरण। मानवता इस वैश्वीकरण से लाभान्वित हो रही थी, लेकिन समान रूप में नहीं। उसका बड़ा हिस्सा उपनिवेशवादी देश हड़प जाते थे।

वैश्वीकरण का इतिहास

भूमंडलीकरण सामान्यतः एक ऐसी अवधारणा होनी चाहिए थी कि पूरे विश्व में एक संस्कृति विकसित हो जो पूरे भूंमडल को एक विश्वग्राम में परिवर्तित कर सारी दुनिया के मनुष्य–मात्र के कल्याण के लिए प्रतिबद्ध होती। इस रूप में यह हमारी वसुधैव कुटुम्बकम् की धारणा के अनुकूल होता जिसमें विश्व मानवता के कल्याण की शिव कामना है किंतु आज वर्तमान रूप में वैश्विकरण एक ऐसी धारण है जिसका मूलाधार बाजार, बाजारवाद और उपभोक्तावाद है। पूरी दुनिया को अपने बाजार के रूप में परिवर्तित कर विश्व की सर्वोच्च– सुपर शक्ति अमेरिका अपने रूप में ढालकर सांस्कृतिक दृष्टि से अपना बनाने, आर्थिक दृष्टि से अपने न्यस्त स्वार्थों की संपूर्ति केलिए पूरे विश्व को एक रंग में रँगने के संकल्प को कार्य रूप दे चुका है, पूरा विश्व उसके द्वारा परिकल्पित माँल संस्कृति बनकर रह गया है।

यह वैश्विकरण एक प्रकार से पूरी दुनिया का अमेरिकीकरण है जो सारे राष्ट्रों की स्थानिक संस्कृति, जातिय चेतना को पूरी तरह लील कर अपने रंग में रंग डालने की बड़ी भारी सफल कूटनीति है जिसके कारण पूरा विश्व उसकी चपेट में आ चुका है। एक प्रभंजन के प्रवेग से अमेरिकी अर्थनीतियों और तथाकथित भूंमडलीय सांस्कृति, सांस्कृति की चारों ओर अपना पसारा पसारा चुकी है। यह चाहिए था कि पूरे विश्व स्तर पर सभी देशों की सभ्यताएँ –संस्कृतियाँ मिलकर मानव कल्याण के एक मंगलकारी स्वप्न को यथार्थ रूप में देने का प्रयत्न करती किंतु हुआ इसके बिलकुल उलट कि प्रत्येक देश की संस्कृति के

शुभ और शिव को अमेरिकी संस्कति के दानवी डैनों ने दबोच कर एक न–अंकल सैम–संस्कृति का पसारा चहुँ ओर फैला दिया। प्रत्येक राष्ट्र के सामने यह समस्या आ खड़ी हुई कि वह पुरातन को न छोड़ पाने के मोह में रहते हुए भी इस नयी संस्कृति के कम्बल को ओढ़ने लगा, पूरी तरह अपने से चिपकाये हुए, उसमें एक नई ऊष्मा खोजने लगा। इसलिए न–न करते हुए भी सभी उससे चिपट कर पूरी सरी गले लगाने में ही अगाध प्रसन्नता अनुभव करने लगे। सूचना प्रौध्योगिकी, तकनीकी उन्नती, उपग्रत दृ सैटेलाइट–क्रांति ने राष्ट्रों की भौगोलिक सीमाओं का अर्थ समाप्त कर पूरी दुनिया को एकमेल करने का बीड़ा उठा लिया है। प्रत्येक देश की राष्ट्रीय अस्मिता, भाषा संस्कार, बोलियाँ, भाषाएँ, लोक–संस्कृति, सब कुछ मटियोमेट, होकर अमेरिकीकरण की प्रक्रिया में है। भारतीय संस्कृति का चरित्र प्रारंभ से ही उदार रूप में सर्वसमावेशी रहा है, जितनी भी संस्कृतियों के कारवाँ यहाँ आए, वे यही की संस्कृति में घुलमिल कर एकमेल हो गए।

किंतु अब उत्तर आधुनिक समय में वैश्वीकरण की यह आँधी जितने प्रवेग से भारत में आई, हमारी संस्कृति के भी पैर उखाँड़ दिए हैं, अपने पैरों को पूरी शक्ति से रोपे रखने के सभी प्रयत्न प्रायः निष्फल होते नजर आ रहे हैं, हम भी वैश्विकरण के बहाव में बहकर नव विकास के नाम पर इसी वैश्विक गाँव–ग्लोबल गाँव–का अंग बनते जा रहे हैं। "परिवेश ने हमारे ऊपर इन स्थितियों को पूरी तरह थोपकर हमें उपभोक्तावादी संसार के ऐसे मायावी व्यूह में डाल दिया है कि हम उससे निकल पाने की जुगत नहीं निकाल पा रहे हैं। पूरी दुनिया ऐसी उपभोक्तावादी संस्कृति में तब्दील हो रही है जहाँ पैसा ही सब कुछ हैं।"....2

वैश्वीकृत नव उदारवाद ने गरीबी और युवा बेरोजगारी की दर पूरे विश्व में किस प्रकार बढ़ायी है इसे अब अमेरिका से उठे जनांदोलन–बॉल स्ट्रीट पर कब्जा करो, आक्यूपाई वॉल स्ट्रीट जैसे बवंडर के रूप में ले लिया। यह संकेतित करता है कि वैश्वीकरण, ने विश्व के गरीबों– जो अमेरिका में अपने को हम 99 प्रतिशत हैं– वी आर नाइनटी–नाइन परसेंट – कह रहे हैं– को किस स्थिति में लाकर खड़ा कर दिया है। पूरी

दुनिया में कमोबेश यही स्थितियाँ भूमंडलीकरण की सौगात के रूप में सामने आ रही हैं। बाजारवाद के युग में साहित्य और कलाओं की कोई उपयोगिता सामान्य मनुष्य को दिखाई नहीं दे रही है, किंतु वैश्वीकरण के इस घोर तमस में भी कलाएँ और साहित्य ही मनुष्य की संस्कृति के श्रेष्ठ को बचाने का उपक्रम कर सकती हैं। यह सुखप्रद स्थिति है कि सभी कलाएँ और साहित्य भूमंडलीकरण की दानवी शक्तियों का भरपूर विरोध कर रही हैं।

वैश्वीकरण एक आधुनिक सिद्धांत नहीं है। सदियों से पहले वैश्वीकरण की अवधारण हुई थी। वैश्वीकरण शब्द अंग्रेजी शब्द Globalisation का पर्यायवाची शब्द है। Global शब्द ही परिवर्तन का सूचक है। सन् 1960 में इसका प्रयोग दुनिया से सम्बन्धित या पूरे संसार के अर्थ में किया था। मार्शल माक्लुहान (Marshall Mucluhan) 1964 इसका प्रयोग विश्व ग्राम के लिए किया था। सूचना और संचार माध्यमों के आविष्कार के पहले ही उन्होंने संसार भर को एक रस्सी में पिरोने की कामना की थी।

आफ्रिकी लोगों के उपनिवेश से वैश्वीकरण की शुरूआत मान सकते हैं। दूसरी तरफ से कहें तो 5 वीं और 6 वीं सदी के सौराष्ट्रिसम और बुद्धिम नामक दो धर्म के द्वारा इसका आविर्भाव हुआ। सन् 1776 में प्रकाशित एडम स्मित की पुस्तक "वेलथ ऑफ नेशन" में पूँजीवादी व्यवस्था एवं स्वतंत्र व्यापार के बारे में बाताया है। प्रस्तुत रचना के अनुसार वैश्वीकरण का आरंभ 18 वीं शताब्दी के उत्तरार्ध में माना जा सकता है। अट्लान्टिक महासमुद्र को पार करनेवाला प्रथम तार सन् 1866 में आया। इस सदी के अन्त तक आते–आते संसार तार (Tele phone), वैश्विक बाजार (Global Commodity Market), वैश्विक ब्रान्ट नाम (Global brand name), वैश्विक संघ (Global association), सामाजिक आन्दोलन (Social movement), नारीवादी क्रियाकलाप (Feminist activation) आदि के द्वारा वैश्विक संबंध बढ़ गये। 19 वीं सदी के अंत में इन सबकी प्रगती कोलनीय सत्ताधारियों की उन्नती का भी कारण बना। वैश्वीकरण में बहुत अधिक

प्रगति पिछली आधी सदी में हुई। जेट हवाई जहाज, उपग्रह, दूरदर्शन आदि का प्रयोग बहुत बढ़ गया। आजकल समाज सबसे अधिक वैश्विक हो रहा है।

3.2 भारत और वैश्वीकरण

हर विकासशील देश के पास निवेश के लिए पूँजी की कमी थी। इस निवेश अंतराल को पूरा करने के लिए विदेश पूँजी की आवश्यकता थी। इसका फायदा उठाकर भूमण्डलीकरण ने विश्व व्यापार के दायरे में सारे दुनिया को घसीट लिया। भारतीय संदर्भ में वैश्वीकरण का अर्थ है विदेशी कंपनियों को भारत में पूँजी निवेश करने की अनुमति देना तथा देशी बाजारों को विश्व के व्यापारियों के लिए स्वतंत्र रूप से वस्तुओं का क्रय–विक्रय करना। वैश्वीकरण की प्रक्रिया में तेजी भारत द्वारा 24 जुलाई 1991 में लागू की गई आर्थिक नीति के परिणाम स्वरूप आईय यह अंतर्राष्ट्रीय मुर्दाकोष और विश्व बैंक के दबाव के कारण अपनाई गई थी।

भारत के इतिहास में 15 आगस्त 1947 की तारीख का मतलब सभी को मालूम है, पर 24 जुलाई 1991 के महत्व को एहसास अभी बहुत कम लोगों को हो पाया है। सन् 1947 से, लगभग चार दशक से ज्यादा की अवधी में जिस राजनीति–समाज–संस्कृति की रचना हुई थी, वे सब हमारे हाथों से फिसल गयी। हमारे देश की बागडोर परोक्ष रूप से दूसरों के हाथों में पड़ गयी। यह भारत के वैश्वीकरण की शुरूआत थी।

वैश्वीकरण का यह क्षण अचानक नहीं आया है। असल में कई साल से राष्ट्रीयता और अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर वैश्वीकरण के लिए जमीन पक रही थी। हथियारों की होड़ और अन्य कारणों से तत्कालीन समाजवादी राज्य का ढाँचा संकटग्रस्त हुआ। दुनिया एक ध्रुवीय होने की तरफ बढ़ी। पहले अस्सी के दशक में उत्पादन का वैश्वीकरण हुआ। बहुराष्ट्रीय निगमों में अपना पूँजी के वैश्वीकरण के लिए विख्यात है। पूँजी का उन्मुक्त प्रवाह सुनिश्चित करना इस वैश्वीकरण का मकसद था। जिस के लिए गाट आदि अर्थव्यवस्था की रचना कर डाली।

अब "बाँटो और करो" के पुराने हथकड़े को नयी अभिव्यक्तियाँ और उनमें निहित राजनीतिक–सांस्कृतिक बहुलता का, चलाकी के साथ शैतानी लक्ष्यों के साथ दोहन किया जा रहा है। भारत एक बहुसांस्कृतिक देश है। अब जो समानता की बात है वह भूमंडलीय पैमाने पर है। अर्थात वह संप्रभु राज्यों को उनकी वैधता से वंचित करके उन्हें नष्ट कर देना चाहता है। साथ ही वह भूमंडलीय दायरे से कई तरह के समुदायों और संस्कृतियों को निष्कासित करके हाशिये पर फेंक देना चाहते हैं। इनमें महिलाएँ, बच्चे, बूढ़े, आदिवासी अरबों लोग शामिल है। वैश्वीकरण से इस समय हमारी पुरानी परम्पराएँ, आस्थाएँ एवं मान्यताएँ धूमिल हो रही और उसके स्थान पर एक नये प्रकार की भूमंडलीय संस्कृति का जन्म हो रहा है।

भारत में वैश्वीकरण की कल्पना

भारत वर्ष के लिए वैश्वीकरण की कल्पना वैदिक युग से रही थी। "आ न भद्रः क्रवतो यन्तु विश्वतः" की उद्घोषणा होती रही जिसमें विश्व को सुसंस्कृति कराने की संकल्प है। 'सर्वेन सुखीन संतु' में सर्वहित की मानसिकता है, न कि किसी का दुःख पहुँचाना या शोषण करना। रवीन्द्रनाथ टागौर बहुत पहले विश्व मानव की अवधारणा पर बात कर चुके थे। इसके पीछे "वसुधैव कुटुम्बकम" की भावना है।

हमारे वैदिक विचारों के अनुसार मनुष्य कामों (इच्छाओं) का भण्डार है। जिसके कारण वह दुबारा जन्म लेता है। जो मनुष्य इन इच्छाओं से मुक्त होता है, वह 'ब्रह्म' में विलीन होता है। ब्रह्म विश्व का सूचक है। भारतीय दर्शन के अन्तर्गत यह वैश्वीकरण की भावना निहित है। दूसरों के लिए जीने की भावना भारत के वर्गाश्रम धर्म की मूलभूत चेतना है। आर्यों के आगमन के बाद प्रत्येक जनता को अपने काम के अनुसार चार वर्णों में विभाजित किया गया– ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। इनमें प्रत्येक जाति अपने काम में निपुण थे। दूसरों की भलाई के लिए यत्न करने की भावना वैश्वीकरण का भी आधार है।

हमारे दर्शन में बताया है कि जो मनुष्य सभी को समान दृष्टि से देखता है वह ब्रह्म पद प्राप्त कर सकता है। विश्व ग्राम की भावना के पीछे भी "अंह ब्रहास्मि" की भावना ही है। समाज की सारी मुसीबतों का कारण अनियमित धन, शक्ति, संपत्ति आदि है। हमारे दर्शन में बताया है कि आत्मसाक्षात्कार मिलने के लिए सबों को एक समान देखना है। "एकास्मित्व", "अद्वैतवाद", "त्तवमसि", "सोह ब्रह्मास्मि" आदि के पीछे भी "परमात्मैक्य बोध" या विविधता में एकता की भावना ही है।"....3

आज के वैश्वीकरण के पीछे परहितवाद नहीं है, स्वार्थता है। उसमें दूसरों को लूटने की भावना है। आज जिस वैश्वीकरण का डंका बज रहा है वह उक्त 'वसुधैव कुटुंबक' की संकल्पना से एकदम अलग है। यह तो बाजारवाद को बढ़ावा देकर इंसानों के बीच दूर पैदा कर रहा है। आज की दुनिया में देश की हैसियत इतनी घट गयी है कि वे अपनी सत्ता का पूरा इस्तेमाल करने की स्वतंत्रता खो चुकी है। सत्ता हावी होती चली जा रही है। इतना ही नहीं भारत जैसे तीसरे देश इन बहुराष्ट्रीय निगमों की गतिविधियों को ठीक रूप से निगरानी करने का काम नहीं किया है।

भारतीय संदर्भ में वैश्वीकरण

असल में भारत में वैश्वीकरण का स्वागत भी है और विरोध भी। यह भी है कि जाने–अनजाने में भारत के बहुत से सामाजिक परिवर्तनों को वैश्वीकरण के साथ जोड़ दिया जाता है। भारतीय संदर्भ की समीक्षा में संभवतः वैश्विक स्थावीयता की परिस्थितियों को देखा जा सकता है। इसका अर्थ है स्थानीय परिस्थितियों के अनुसार वैश्विक दृष्टि से जीना। यह माना जाता है कि वैश्वीकरण स्थानीय संस्कृतियों के मामलों को विश्व के साथ समायोजित करता है। भारतीय सामाजिक–सांस्कृतिक व्यवस्थाओं में ऐसा समायोजन ऐतिहासिक है। इतिहास में जो भी नृजातीय समूह इस देश में आते रहे वे सामाजिक–सांस्कृतिक दृष्टि से अपने को समायोजित करते रहे। यद्यपि भारत में वैश्वीकरण के प्रभावों की कोई विशेष व्याख्या उपलब्ध नहीं है, पर एक सामान्य दृष्टि में ऐसा कोई विशिष्ट प्रभाव दिखाई नहीं देता है। प्रो.एम.एन. श्रीनिवास (1992) की

पाश्चात्यीकरण तथा आधुनिकरण की अवधारणाएँ यह तो कहती है कि ब्रिटिश साम्राज्य ने भारतीय सामाजिक–सांस्कृतिक जीवन को प्रभावित किया है, पर कोई बहुत बड़ा परिवर्तन ला दिया है, ऐसा वे स्वीकार नहीं करते। भारतीय समाज और सांस्कृतिक पर कोई विपरीत प्रभाव भी नहीं दिखाई देता। उदाहरण के लिए मेकडोनाल्ड की भोजनात्मक श्रृंखला अब भी उस क्षमता को प्राप्त नहीं कर पाई है जो उड्डीपी भोजनालय की इडली, डोसा या पंजाबी ढाबों के साथ जुड़ी हुई है।

बहुलता, तुलनात्मक तथा स्थानीयता बहुत से राष्ट्रों के लिए सांस्कृतिक विविधता के बहुत पुरानी प्रतीक है। विश्व में भोजन की आदतों तथा बौध्दिक विकास में परम्पराओं के मिश्रण मौजूद हैं तथा मिश्रित धरोहर की भूमिका के उदाहरण देते हुए अमर्त्य सेन (1996) ने कहा है कि क्या पाश्चात्य है या क्या पूर्वी (भारतीय) निर्णय करना कठिन है। किसी भी विचार के बारे में यह कहना कि यह विशुध्द पाश्चात्य है या विशुध्द भारतीय, बड़ा भ्रामक है। यही बात टेलिविजन के लिए भी कही जा सकती है। टेलिविजन वैशवीकृत संचार साधनों में महत्वपूर्ण साधन है। किसी भी अन्य भाषायी या संस्कृति के कार्यक्रमों की अपेक्षा स्थानीय परिवेश या कथाएँ या संगीत या अन्य सांस्कृति पक्ष अधिक लोकप्रिय है। वैश्वीकृत जनसंचार की ये व्यवस्थाएँ भारत अथवा अन्य गैर पाश्चात्य देशों पर अपने को केन्द्रित करते हैं तो वे स्थानीयता पर ही अधिक जोर देते हैं। लेकिन वैश्वीकरण ने कुछ ऐसी परिस्थितियाँ भी पैदा की है जो भारतीय समाज के एक वर्ग केलिए संस्कृतिकरण के समान है। इस संस्कृतीकरण ने एक ऐसा वर्ग तैयार किया है जो अपनी संस्कृति में अन्य देशों की जीवन शैली और मूल्यों को परिवेश के अनुसार स्थापित करना चाहते हैं।

व्यापक वैश्वीकरण ने कुछ व्यापक परिवर्तन किए हैं। पर्यटन, व्यवसायियों की गतिशीलता तथा आप्रवासी उपसंस्कृति के उदय ने परिवर्तन की नई परिस्थितियाँ उत्पन्न की है। वैश्विक आर्थिक नीतियों तथा व्यापार वाणिज्य की नई संभावनाओं ने भी सांस्कृतिक परिवर्तन पैदा किए हैं। उपभोक्ता के प्रतिमानों और जीवन शैली में कुछ बदलाव आया है। वैश्विक विचारों के आदान–प्रदान में इससे बहुत सुविधा हुई है। वैश्वीकरण ने उन शक्तियों

का विस्तार किया है जो राज्य, राजनीति, प्रजातंत्र तथा सिविल सोसायटी पर होने वाली बहसों से जुड़ गया है। ऐसे बहुत से मुद्दे हैं जो नए हैं, जैसे राष्ट्र–राज्य की भूमिका, राजनीतिक दलों की भूमिका और स्वाधिकार पर बहस और ये बहसें नए चिन्तन को जन्म दे रही हैं। संस्कृति का आधुनिकीकरण और वैश्वीकरण का ऐसा कोई भी प्रयास यदि भारतीय संस्कृति मूल पर प्रहार है तो उसका विरोध भी किया जाता है। समाज के सांस्कृतिक मूल्य, भाषा, सामाजिक प्रचलन और जीवन शैलियों में भी कुछ बदलाव दिखाई देता है। वैश्वीकरण कई स्वरूपों जैसे, आर्थिक, तकनीकी, पर्यावरणीय और कई प्रकार के सामाजिक परिवर्तनों के माध्यम से भारतीय समाज में पसरा है और कहीं न कहीं पारंपरिक सांस्कृतिक शैली, उनके स्वरूपों और उनकी वैचारिकी पर उसका प्रभाव पड़ा है। संभवतः इसे स्थानीय सांस्कृतिक उपादानों के लिए खतरा भी माना जा सकता है। भारत में यह तथ्य समझना आवश्यक है कि लोग वैश्वीकरण के वाहकों को किस रूप में लेते हैं? उसे किस रूप में समझते हैं? और किस प्रकार उसे ग्रहण करते है? किसानों के, व्यापारियों उध्योगों के स्वामी तथा कृषि मजदूरों के मूलभूत आर्थिक हितों पर वैश्वीकरण का कोई भी प्रहार भारतीय सामाजिक व्यवस्थाओं के विरूद्ध प्रहार है। ऐसे भी प्रयास हैं जिनमें बजाय वैश्वीकरण का प्रतिरोध करने के, वैश्वीकरण के साथ चलने की प्रवृत्ति अधिक है।

संस्कृति के क्षेत्र में स्थानीय तथा क्षेत्रिय संस्कृति वैश्वीकरण के अपने प्रतिमान है। कई कारण हैं जिन्होंने इन प्रभावों की रचना की है। यह कहना उचित होगा कि वैश्वीकरण अब भी मध्यम अवस्थाओं में है। भारत की 70 प्रतिशत जनसंख्या अब भी कृषि पर निर्भर है। गाँवों की सामुदायिकता पर राजनीतिक क्रियाकलापों का प्रभाव पड़ा है, पर जाति, धर्म, परिवार और कर्मकांडीय व्यवस्थाएँ अब भी यथावत विध्यमान है। संरचनाओं की बहुलता ही स्थानीय तथा क्षेत्रीय संस्कृतियों के स्वरूपों का निर्माण करती है। इन संरचनाओं के प्रति प्रतिबध्दताएँ स्थानीय कलाकृतियों के निर्माता वैश्वीकरण को अपना मित्र ही समझते है। वैश्वीकरण इन सब को प्रोत्साहित करता है, अंतर्राष्ट्रीय बाजार को खोलता है, पंजी के प्रवाह को खोलता है और सांस्कृतिक उत्पादों को नए स्वरूप प्रदान करता है।

बजाय इसके कि उनकी पहचान उखड़ने लगे वैश्वीकरण उस पहचान को नया अर्थ दे रहा है। छोटे दस्तकार इसमें सम्मिलित हुए हैं।

जनसंचार और वैश्वीकरण

संस्कृति के वैश्वीकरण प्रसार का एक प्रमुख तथा महत्वपूर्ण वाहक जन संचार है। जन संचार की समाजशास्त्रीय व्याख्याओं में यह स्पष्ट है कि एक स्थान से एक ही समय में बहुत से लोगों को संबोधन, जनसंचार की प्रक्रिया में निहित है। पिछली शताब्दी में इस अर्थ को फलीभूत करने के लिए यांत्रिकी का विस्तार तथा यांत्रिकी का उपयोग महत्वपूर्ण रहा है। इन यंत्रों के माध्यम से इस शताब्दी के पहले से ही विश्व स्तर पर संवादों का प्रसार होना प्रारंभ हो गया था। टेलीफोन आवाज़ रिकॉर्ड कर उसे पुनःसुनने की व्यवस्था, रेडियो, टेलीविजन, वीडियो, मोबाइल फोन, और अब इंटरनेट के उपयोग ने दुनिया को बहुत छोटा कर दिया है। उपर्युक्त सांस्कृतिक विश्लेषण के प्रसार का बहुत कुछ दायित्व जन संचार के इन्हीं साधनों को जाता है। जनसंचार के इन साधनों ने एक वैश्विक मुख्यधारा का निर्माण किया है, जिसका उद्देश्य है सभी को मुख्यधारा में लाया जाए। मुख्यधारा की जो प्रक्रियाएँ विकसित हुई है उनसे अभिप्राय है– व्यक्तियों की व्यक्तिगत भावनाएँ जाग्रत करना और उन भावनाओं को वैश्विक भावना के साथ जोड़ना। इस प्रयास से समन्वयता का भाव जाग्रत हो सकता है और वैश्विक भावनाओं के साथ लोग एक दूसरे के साथ जुड़ सकते हैं। यह भी संभव है कि कतिपय, विचार संस्कृति के अंश या एक व्यवस्था का प्रभावी तत्व विसरण हो। यह भावना स्वतः स्फूर्त होकर अपना रूप धारण कर ले और वैश्विक भावना का विस्तार करे यह आकांश भी जन संचार के प्रयासों के साथ जुड़ी हुई है। वैसे भी जनसंचार समाजों में आधुनिकता के वाहक माने जाते है। यह बात सभी लोग मानते है कि जनसंचार के इन साधनों ने तथा इस संबंध में विकसित होती नई तकनीकों ने विचारों तथा नई भावनाओं को विकसित करने में क्रांतिकारी पहल की है।

यह समझा जा सकता है कि व्यक्ति से व्यक्ति के पारम्परिक संवादों पर अब जब संचार की नई तकनीकें हावी है और समूचे विश्व में धीरे–धीरे ये संचार साधन लोगों के

विचारों और भावनाओं को प्रभावित करने लगे है। जो कुछ भी छपता है, प्रसारित होता है, या बनाया जाता है उसमें विश्व भावना के तत्व सम्मिलित होते हैं। ये ही तत्व वैश्वीकरण के प्रसार में सहायक हैं।

वैश्विक स्तर पर जनसंचार के विकसित होने के दो रूप है। पहला विभिन्न देशों में जनसंचार के अपने विकास में राजनीति से प्रभावित हैं। दूसरे जनसंचार के अपने संगठन, कंपनियाँ और कारपोरेशन जनसंचार के व्यापारिक प्रतिष्ठान वैश्विक स्तर के है। विभिन्न देशों में ये तकनीकि सहायता देते है और प्रायः विभिन्न देशों में किए मीडिया प्रदर्शन के लिए प्रतिमान भी बन जाते हैं।

टेलीफोन और मोबइल सारे विश्व में व्यक्तिगत दूरिया कम करने के सर्वोच्च साधनों के रूप में स्वीकार लिए जाते हैं। व्यक्तिगत संपर्कों तथा व्यापारिक संपर्कों के लिए ये साधन आज बहुत महत्वपूर्ण है। वैश्विक प्रसार में इनके माध्यम से राष्ट्रों की सीमाएँ टूट गई हैं। लेकिन टेलीफोन और मोबाइल का उपयोग व्यक्तिगत संपर्कों के साथ अधिक जुड़ा है। नई टेक्नोलॉजी अब मोबाइल यंत्रों को इंटरनेट से जोड़ रही है। इसी कारण संपर्कों का विस्तार और भी अधिक बढ़ गया है। प्रेषण की इन नई सुविधाओं की बदौलत विश्व के किसी भी कोने से संपर्क स्थापित किया जा सकता है और संवाद की परिस्थितियाँ पैदा की जा सकती है। विचारों के इसी आदान–प्रदान ने नए मूल्य पैदा किए है और वैश्विक सहमति के आधार प्रदान किए। 1990 में वह तकनीक प्रारंभ हुई जो आज विश्व भर में सर्वाधिक लोकप्रिय है और निम्न वर्ग से उच्च वर्ग तक समान रूप में प्रयुक्त है। धीरे–धीरे इसका विस्तार भी हो रहा है।

वैश्विक स्तर पर संचार की यह व्यवस्था तथा उपयोग की दृष्टि से यह अलग प्रयुक्त है। पहली पीढ़ी की टेलीफोन व्यवहार तथा उपयोग की दृष्टि से यह अलग है। बहुत से देशों में टेलीफोन की पुरानी पद्धती अनियोजित तथा अविकसित है। मोबाइल फोनों ने नई तकनीकों के माध्यम से अबाधित तथ अतिदुत गति से स्थापित होने वाली विधि का रूप ले लिया। और जैसा कि कहा जा चुका है कि मोबाइल में इंटरनेट जुड़

जाने के साथ संचार के मामले में नई और आने वाली पीढ़ियाँ मोबाइल के प्रारंभ के युग से अलग होंगी। मोबाइल ने सेवा व्यवसाय को नया बल दिया है। तात्कालिक संपर्क बढ़ा है प्रेम प्रकट करने के पारंपरिक इजहारों के स्थान पर मोबाइल न केवल बदलाव है, साथ ही बात करने की निर्भीकता तथा स्वतंत्रता भी इससे जुड़ी है। वैश्वीकरण के इस दौर में मोबाइल, संचार की नई व्यवस्था के स्वरूप सर्वत्र उपलब्ध तथा सर्व–ग्राह्य है।

मोबाइल के बाद संचार साधनों में इंटरनेट ने क्रांति की। इंटरनेट विश्व में सर्वाधिक द्रुतगति का साधन है और इसका उपयोग विविध कार्यों के लिए हो सकता है। अवकाश के क्षण की गतिविधियाँ ज्ञान प्रश्नों की खोज, संदेशों का आदान, विचार स्वातंत्र्य (ब्लॉग तथा ट्रिवटर के माध्यम से), संगीत फिल्मों तथा समाचार पत्रों का ग्रहण इत्यादि बहुत से कार्य इन्टरनेट के साथ सिमट गया। इन्टरनेट जासूसी तथा गुप्त संदेशों का वाहक भी है। इन संदेशों को हेक किया जा सकता है, रोका जा सकता है। हाल ही में अमेरिका पर इन यंत्रों के माध्यम से जासूसी करने का आरोप लगा था। यह जासूसी केवल एक देश के लिए नहीं थी, सारे विश्व के प्रमुख व्यक्तियों के संवादों की यह जासूसी विश्व व्यापी थी। इंटरनेट ने फेसबुक तथा ट्विटर के माध्यम से एक विश्वव्यापी चौपाल खोल दी है।

इस चौपाल पर जो लोग मौजूद हैं, वे एक दूसरे से अन्तर्क्रिया करते हैं और विश्वव्यापी विचारों पर टीका टिप्पणी कर विचारों को सुगठित रूप प्रदान करने का प्रयास करते है। वैश्विक सलाह और वैश्विक समस्याओं पर चिन्तन का कार्य ये चौपालें करती हैं। मनोरंजन की दृष्टि से भी इंटरनेट फिल्मों तथा संगीत के भंडार को प्रस्तुत करने में सक्षम है। यू ट्यूब इसका उदाहरण है। विश्व की किसी भी भाषा या शैली का संगीत या विश्व की किसी भी भाषा की फिल्मों डाउनलोड कर आप उन्हें देख सकते हैं, या सुन सकते हैं। अवकाश के क्षणों में इंटरनेट आनंद को प्राप्त करने में सहायक है। कला, साहित्य, संगीत और ज्ञान के वैश्विक प्रसार का कार्य इंटरनेट से संभव हुआ है। किसी भी विषय से संबधित लाखों पृष्ठों की सामर्गी का लाभ शोधकर्ता तथा अन्य जिज्ञासु उठाते भी हैं।

विश्व व्यापार के लिए भी इंटरनेट की सहायता बाजार की तात्कालिक अवस्थाओं को प्राप्त करती है। एक क्षण में आर्थिक, आधार तथा बाजार की हालत व्यक्तिगत कम्प्यूटर के माध्यम से जानकारी में रहते हैं। वैश्विक दृष्टि से यदि देखा जाए तो आंकडे बताते है कि इंटरनेट का सबसे अधिक उपयोग करने वाले यूरोपीय तथा अमेरिकी देशों में है। भारत में इंटरनेट का उपयोग करने वालों की संख्या बढ़ रही है और आश्चर्य नहीं कि शीघ्र ही भारत इंटरनेट का उपयोग करने वाले देशों में अग्रगी होगा।

रेडियो सर्व सुलभ तथा अधिक प्रयुक्त होने वाला जनसंचार का साधन है। प्रारंभ से ही रेडियो का स्वामित्व तथा नियंत्रण राज्य के हाथों में रहा। अधिकांशतः प्रसारण व्यवस्थाओं पर नियंत्रण था। यह नियंत्रण राज्य की गतिविधियों को दबाता था। पर ये कार्यक्रम लोकप्रिय थे और विविध देशों के प्रसारणों को ग्राह्य कर सकते थे। अभि भी विश्व के विभिन्न देशों के प्रसारण वहाँ की शासकीय व्यवस्थाओं से प्रभावित है, पर ये प्रसारण विश्वव्यापी है। वॉयस ऑफ अमेरिका, बीबीसी, रेडियो चाइना, रेडियाँ मॉस्को या ऑल इंडिया रेडियो का विदेशी प्रसारण विश्वव्यापी है। बीबीसी के प्रसारण न केवल अंग्रजी में बल्कि विश्व की अनेक भाषाओं पर केन्द्रित है।

संस्कृति की विभिन्न आकृतियों विशेष रूप से संगीत की विभिन्न धाराओं के प्रसारण में रेडियो का योगदान रहा है। रेडियो सीलोन इसका बड़ा उदाहरण है। भारत में रेडियो के सामाजिक वितरण को यदि देखें तो रेडियो भारी संख्या में निम्न वर्गों का संचार साधन है। यदि यह सवाल किया जाए कि वे रेडियो से क्या ग्रहण करते है, तो कुछ सर्वेक्षण इस बात की ओर इंगित करते है कि संगीत, समाचार और मनोरंजन के कार्यक्रम उनको वौश्विक विविधता के साथ जोड़ते है। बड़े दृ बड़े रेडियो के स्थान पर छोटे ट्रांजिस्टर और अधिक प्रभावशाली रहे है। एफ एम के आने के बाद व्यापारिक रेडियो चेनल भी प्रारंभ हुए। भारत में कम्युनिटि तथा स्थानीय रेडियो सूचना प्रदान करने के और भी अधिक सशक्त साधन बन गए। वैश्विक समाज और वैश्विक संभावनाओं पर प्रसारण कम से कम विचारों के वैश्वीकरण के साथ हमेशा जुड़े रहे है। टेलीविजन जनसंचार के लिए महत्वपूर्ण कदम

था। चित्र और आवाज के संगम से सारी दुनिया को देखने की संभावना ने इसे लोकप्रियता प्रदान की। बहुत से अर्द्ध विकसित देशों में यह बहुत बड़ा आकर्षण था। अन्य माध्यमों की तरह टेलीविजन पहले नियंत्रित था। पर बाद में टेलिविजन प्रसारण वस्तुतः एक व्यापारिक संदर्भ बन गया।

1991 के बाद टेलीविजन मुक्त हो गया और उसके बाद ही वैश्विक कॉरपोरेट समूहों का आगमन प्रारंभ हुआ। जी, सोनी, नेशनल ज्योग्रफिक, बीबीसी, सीएनएन आदि अनेक चौनल हैं जो वैश्विक व्यापारिक संगठन हैं। ऐसा नहीं है कि भारत में अपने स्वयं के व्यापारिक प्रतिष्ठान नहीं पनपे। पर बहुत से ऐसे प्रतिष्ठानों में विदेशी पूंजी भी लगी है। अप्रत्यक्ष रूप में टेलीविजन व्यापारिक वैश्वीकरण का हिस्सा बन गया। भारत में अब भी जनसंख्या का एक बड़ा हिस्सा टीवी से जुड़ा हुआ नहीं है पर भारत के मध्यमवर्ग का बड़ा हिस्सा टीवी के साथ जुड़ा हुआ है और विश्व संस्कृति के वाहकों का लक्ष्य भी यही था। यदि टीवी सैटों की बात करें तो उनमें भी विदेशी कॉरपोरेट संस्थाओं ने अपना स्थान बना लिया है। टीवी मीडिया इस प्रकार दो तरह से आर्थिक वैश्वीकरण का हिस्सा बन गया। पहला प्रसारण के माध्यम से और दूसरा उन यंत्रों अथवा टीवी सैटों के माध्यम से।

शायद अन्य किसी मीडिया की अपेक्षा संगीत के स्वरूप वैश्वीकरण से अधिक प्रभावित हुए हैं। संगीत के रिकॉर्ड बनाने और बाद में कैसेट तथा सीडि बनाने के लिए कम्पनियों स्थापित हुई, जिनका वैश्विक विस्तार था। संगीत के स्वरूपों का विकास भी विश्वभर में बहुत तेजी से हुआ है। पॉप संगीत एक ऐसा ही संगीत है जिसके स्वामित्व ब्रिटेन और अमरीका में हैं। भारत के पारंपरिक शास्त्रीय संगीत के समर्थक पाश्चात्य संगीत तैयार करने और उसके वितरण के कॉरपोरेशन व्यापारिक आधार पर बने और संगीत एक उद्योग के रूप में बदला। संगीत समूह बनने शुरू हुए और शो बाजार के वे अंग बने।

छपे हुए समाचार पत्र और पत्रिकाएँ का प्रिन्ट मिडिया जनसंचार साधनों में सबसे पुराना है। इतिहास कुछ भी रहा हो समाचार पत्र और पत्रिकाएं, देशों, खासतौर पर प्रजातांत्रिक देशों में बहुत प्रभावशाही रहे हैं। आज भी प्रेस शक्तिशाली माध्यम है। विश्व के

शीर्षस्थ समाचार पत्रों ने अपनी कड़िया स्थापित की हैं । बहुत सी पत्रिकाएं विशेष रूप से विज्ञान और जानकारियों से संबंधित पत्रिकाएं विश्वव्यापी प्रसारण की पत्रिकाएं। समाचार संग्रण के भी अपने संगठन हैं और विश्व स्तर पर लिखे गए (फीचर) के वितरण की भी व्यवस्थाएं हैं। आज समाचार पत्र केवल छपाई पर ही निर्भर नहीं है। इन्टरनेट के जरिये दूरिये ने दूसरे साधनों से भी पाठकों को उपलब्ध हैं। विश्व के सभी प्रमुख समाचार पत्र आज आम आदमी की पहुंच में है, और किसी भी समय किसी भी समाचार पत्र की उपलब्धि आज मौजूद है। भारत जैसे देश में कई अखबारों के क्षेत्रीय संस्करण भी हैं। ये संस्करण अपने आपको किसी विशिष्ट राज्य या क्षेत्र पर केन्द्रित करते हैं। परदेश राज्य क्षेत्रों के अतिरिक्त ये समाचार पत्र विश्व घटनाओं को भी प्रस्तुत करते है। विश्व की राजनीति, व्यापारिक संभावनाएं तथा खेलकूद को यह समाचार पत्र संजोते है। अमरीका, यूरोप तथा एशिया के देशों में चीन, पाकिस्तान, ईरान के वैश्विक संबंध की चर्चा ये समाचार पत्र करते हैं। आम पाठकों को वैश्वीकरण के संदर्भ समझानेवाले पत्र ही हैं।

अंत में मीडिया के एक और स्वरूप सिनेमा की चर्चा की जा सकती है। सिनेमा एक रचनात्मकता भी है और व्यापारिक प्रयास भी। यद्यपि भारत में सिनेमा को उद्योगों का दर्जा नहीं मिला है, पर कई देशों में सिनेमा एक उद्योग है। संयुक्त राज्य अमेरिका और यूरोप में सिनेमा के प्रयोगों के बाद भारत में भी सिनेमा का निर्माण प्रारंभ हुआ और आज भारतीय सिनेमा विश्व के तीसरे नंबर का व्यवसाय है। आज भारतीय सिनेमा के सौ वर्ष पूरे हो चुके हैं । यह कहा जा सकता है कि पिछले सौ सालों में भारत वैश्विक सिनेमा के साथ जुड़ा है और कलात्मकता के वैश्विक मानदण्ड पर उसकी कई फिल्मों को सर्वोच्च पुरस्कार भी मिले हैं। जो देश सिनेमा बनाते हैं, वे अपनी फिल्मों का निर्यात भी करते हैं। हॉलीवुड, वाल्ट डिजनी अपनी फिल्मों के ऐसे ही निर्यातक है। विभिन्न देशों में हॉलीवुड के निर्यातकों ने मल्टीप्लेक्स सिनेमाघरों को खड़ा करने में अपना धन लगाया है और फिल्मों के प्रदर्शन के लिए दूसरे देशों के साथ प्रबंध श्रृंखलाएं स्थापित की हैं। पिछले दो दशक से सिनेमा हॉल में जाने के बजाय अपने घरों में ही सिनेमा देख सकते हैं। यह नई प्रवृत्ति है जिसका अब आम उपयोग हो रहा है ।

विभिन्न भाषाओं की फिल्में वीडियो की लोकप्रियता के साथ भी जुड़ी हुई हैं। सिनेमा के अन्तर्राष्ट्रीय पुरस्कार हैं और सिनेमा पर कथा अब किसी सीमा से बंधी हुई नहीं है। यह बात दूसरी है कि अधिकांश देश सिनेमा में अपनी नृजातीयता या त्रासदियों का चित्रण अधिक करते हैं। पर ऐसा सिनेमा भी दर्शकों के लिए वैश्विक स्तर पर खुला हुआ है। अच्छा सिनेमा क्या है, इसका फैसला वे पुरस्कार करते हैं जो प्रतिवर्ष दिए जाते हैं। ऑस्कर, कान्स ऐसे ही पुरस्कार हैं। ये पुरस्कार विश्व स्तर के सिनेमा के लिए हैं।

विश्व स्तर पर सिनेमा के कई पक्ष स्थापित हुए हैं। फिल्म बनाने की तकनीकें सारे विश्व में बदल चुकी हैं। स्थानीय संस्कृतियों के प्रदर्शन सिनेमा की वैश्विक विविधता के प्रतीक हैं। विश्व सिनेमा कलात्मक भी है और समाजों का प्रतिनिधित्व भी। कलात्मक परीक्षण के लिए वैश्विक सम्मान तथा पुरस्कार समारोह विश्व स्तर के हैं। ये पुरस्कार तथा सम्मान, अच्छे सिनेमा के चयन की किसी अन्य विधि से उत्तम माने जाते हैं। समाज शास्त्रीय दृष्टि से यह उन मूल्यों का भी प्रसार है, जो स्थानीय संस्कृतियों में प्रचलित हैं। प्रायः सिनेमा उन मूल्यों का प्रसारक है, जो विश्व की सांस्कृतिक विरासत है। कथाओं, अभिनय, कला तथा कथा के स्वरूपों का एक देश से दूसरे देश में उपयोग हुआ है और यही सिनेमा वैश्विक सिनेमा है।

भारतीय सिनेमा का चरित्र विविधता का है और वैश्वीकरण का असर फिल्मों के विनिमय में भी देखा जा रहा है। विभिन्न देशों में अप्रवासी भारतीयों के लिए अपनी संस्कृ ति का सिनेमा उन्हें विश्व के कई देशों में प्रदर्शित किया जा रहा है। भारत स्वयं में सिनेमा अब पुराने तरीके से नहीं देखे जाते। वैश्वीकरण के कारण नगरों में मल्टीप्लेक्स, शॉपिंग मॉल्स इत्यादि सिनेमा के नए उपभोक्ता केंद्र हैं। वैसे भी पिछली सदी के पांचवें और छठे दशक में अभिनय, फिल्मों के विषय और निर्माण पर विश्व के सिनेमा चरित्रों का प्रभाव पड़ा है। भारत वैश्विक सिनेमा का एक महत्त्वपूर्ण हिस्सा है।

आज की परिस्थितियों में मीडिया के ये सारे साधन समन्वयित है। इनको अलग–अलग करना संभव नहीं है। लेकिन मीडिया के इन साधनों ने वैश्विक मुद्दे खड़े किए हैं। प्रजातंत्र और मीडिया विश्व चर्चा का विषय है। कोई भी प्रजातंत्र जब तक मीडिया को अभिव्यक्ति और आजादी नहीं देता, तब तक सफल प्रजातंत्र नहीं है। प्रेस की

आजादी के प्रश्न सभी विकसित समाजों में स्वीकार किए गए। किसी भी देश में (विशेष रूप से प्रजातांत्रिक देशों में) मीडिया की आजादी आंदोलन का विषय भी है। मीडिया की आजादी का प्रश्न अमेरिका तथा यूरोप के देशों ने अधिक प्रचारित किया तथा एशिया तथा अफ्रीका में उपनिवेशी शासन की समाप्ति के बाद मीडिया द्वारा स्वतंत्र अभिव्यक्ति की वकालत भी की है। साथ ही टीवी और सिनेमा से अपेक्षा की जाती है कि वे समाज का प्रदर्शन स्वस्थ तथा समाज के आचरण के अनुकूल करें । पोर्न (Porn) का प्रदर्शन समाज के आचरण के विपरीत है। भारत के सर्वोच्च न्यायालय ने यौन–अश्लील साहित्य को प्रतिबन्धित करने के लिए कहा था, पर मीडिया पर ऐसे प्रतिबंध समाजोचित माने जाते हैं।

यह भी कहा जाता है कि इन साधनों से प्रसारित संस्कृति ने सांस्कृतिक साम्राज्यवाद भी स्थापित किया है। अमेरिकी मीडिया बहुत से देशों के लिए संदर्भ है। 'टाइम' और न्यूजवीक अमेरिका के लोकप्रिय साप्ताहिक थे। भारत में उसी तर्ज पर भारतीय भाषाओं में अनेक पत्रिकाएं प्रकाशित हुई। ये अभी भी कलेवर, सामग्री तथा पाठकों की रुचि को वैश्विक स्तर पर ले जाने और समझ पैदा करने का काम करती हैं। अंग्रेजी आज वैश्विक भाषा है और छोटे–छोटे देशों में भी अंग्रेजी के अखबार प्रकाशित होते हैं। यूरोप के विविध भाषाओं के स्वरूपों पर भी अंग्रेजी ने प्रभाव डाला है। एक दृष्टि से अंग्रेजी जनसंचार की प्रमुख भाषा है। और केवल जनसंचार की ही नहीं, विभिन्न देशों में संचार व्यवस्था की प्रमुख भाषा है।

मैकलुहान की दृष्टि से मीडिया के वैश्वीकरण ने उन लोगों को आपस में मिलाया है, जो कभी आपस में नहीं मिले, और न मिलने की कोई संभावना है। इंटरनेट पर बिना प्रत्यक्ष मिले लोगों से मिलने–जुलने का बड़ा साधन है फेसबुक या ट्विटर। इसमें प्रायः वे लोग हैं जो केवल चित्र द्वारा एक दूसरे को जानते हैं की पहले ताला क्यों न हो। लेकिन संभवतः इस सारी प्रक्रिया का एक लाभ अवश्य हुआ है। विश्व बहुलता तथा विश्व विभिन्नता के प्रति हमारी सहिष्णुता तथा उसको सहन करने की शक्ति लोगों में बढ़ी है? अपनी जाति या प्रजाति के प्रति अभिमान और दूसरों की अवहेलना अथवा ईर्ष्या के स्थान पर सभी एक साथ प्रतिक्रिया करें और एक नई संस्कृति का निर्माण करें, यह इच्छा विश्वव्यापी है और वैश्विक मानव उद्देश्यों के अनुरूप है।

पिछले तीन दशकों में वैश्वीकरण ने अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर जनसंचार के साधनों की पहुँच तथा विभिन्न संचार साधनों के प्रभाव का रूपांतरण किया है। समाचार संग्रहण और उसके विभिन्न देशों में वितरण का स्वरूप भी बदल लिया गया है। 1970 के बाद जनसंचार से संबंधित व्यापारिक संस्थाओं की बदौलत विश्व के अलग–अलग स्वरूपों में जैसे समाचार–पत्र, पत्रिकाओं, सिनेमा, टेलिविजन आदि में ऐसे रूपांतरण हुए। मीडिया बाजार में भी परिवर्तन हुए। राष्ट्रीय मीडिया बाजारों ने अप्रत्यक्ष रूप से वैश्विक मीडिया बाजार को जगह दे दी है।

भारत में जनसंचार के नए साधनों यथा टेलिविजन, सिनेमा और इन्टरनेट की भूमिका महत्वपूर्ण मानी जा सकती है। टेलिविजन ज्ञान, मनोरंजन और सूचना प्रसारण का वैश्विक आधार है। भारत इसका अपवाद नहीं हैं। भारतीय टेलिविजन के साँप आपेरा स्थानियता से मुक्त नहीं हैं। कुछ अर्थों में ये रूपान्तरण के प्रतीक हैं तो दूसरे अर्थों में ये रूढियों को बहुत प्रभावित नहीं करते। प्रायः रूढियाँ अधिक प्रदर्शित हैं, जनरीतियों का प्रदर्शन उनको सम्मानित करने सरीखा है। भारत की रूढ़िवादी समर्थक राजनीति प्रायः बड़े जोर शोर से प्रस्तुत की जाती है। पश्चिमीकरण संभवतः सामाजिक स्वीकारोक्ति में उपनिवेशवाद का प्रतिनिधित्व करता है। ऐतिहासिक दृष्टि से वैश्वीकरण में उपनिवेशवाद की भूमिका को नकारा नहीं जा सकता, पर फिर वही प्रश्न उपस्थित हो जाता है कि भारत में वैश्वीकरण कितना और किस स्वरूप में स्वीकार किया गया।

शिक्षा व्यवस्था में वैश्वीकरणोन्मुख परिवर्तनों का प्रभाव

वैश्वीकरण के फलस्वरूप देश की शिक्षा व्यवस्था में आये परिवर्तनों पर विचार किया गया । इन परिवर्तनों से न केवल शैक्षिक संबंध, प्रक्रिया एवं प्रकार्य प्रभावित हुए हैं य बल्कि पूरा समाज कमोबेश प्रभावित हुआ है। वैश्वीकरण का एक बड़ा लाभ यह कहा जा सकता है कि इसके चलते शिक्षा का परिदृश्य व्यापक हुआ है। जिससे न केवल ज्ञान, तकनीक और शोध का दायरा विस्तृत हुआ है, बल्कि लोगों की सोच भी व्यापक हुई है। वैश्वीकरण के तहत छात्रों, शिक्षकों व शोधार्थियों का एक देश से दूसरे देश में

आना–जाना, पढ़ना–पढ़ाना, ज्ञान व तकनीक का आदान–प्रदान करना बहुत सुगम हुआ है अन्यथा नौकरशाही की अड़ंगेबाजी के चलते आदमी को पासपोर्ट बनवाने में ही छक्के छूट जाते थे। कहते हैं कि अपराधियों एवं आतंकवादियों के पासपोर्ट, भले ही फर्जी नाम पर ही सही, चुटकी बजाते बन जाते थे, लेकिन एक शरीफ सामान्य नागरिक को सही नाम पर भी पासपोर्ट बनवाने में छठी का दूध याद आ जाता था। भारत में नौकरशाही की मकड़जाल से पार पाने में जब बड़ों–बड़ों के पसीने छूट जाते हैं तो छात्रों व शिक्षकों की विसात ही क्या है? लेकिन वैश्वीकरण के तहत राष्ट्रीय प्रतिबंधों के शिथिल होने से ऐसे मामलों में नौकरशाही के लिए अड़गेबाजी की गुंजाइश बहुत कम हो गई। विदेश जाना आसान हो जाने से भारतीय छात्रों एवं शिक्षकों को अमेरिका व यूरोप सहित विश्व के अन्य देशों में अपनी योग्यता एवं कुशलता का परिचय देने का मौका मिला जिससे न केवल भारत की प्रतिष्ठा बढ़ी बल्कि भारतीयों को विदेशों में रोजगार के अवसर भी बढ़े। वैश्वीकरण के तहत बढ़ते विदेशी संपर्क एवं आदान–प्रदान से भारतीयों का अन्य समाजों से परंपरात्मक अलगाव कम हुआ है। साथ ही दूर देशों में अपनी काबलियत साबित करने से उनमें आत्मविश्वास बढ़ा है। इसके अलावा विश्व में एक अविकसित, अशिक्षित एवं पिछड़े राष्ट्र के नागरिक की छवि से उन्हें मुक्ति भी मिली है।

वैश्वीकरण से एक अन्य बड़ा लाभ यह हुआ है कि शिक्षा पर से सरकार का नियंत्रण यदि पूरी तौर पर हटा नहीं है तो काफी कम जरूर हुआ है। अगर नौकरशाही के सहारे सरकार सार्वजनिक सेवाओं (जैसे : कृ शिक्षा, स्वास्थ्य, परिवहन, सार्वजनिक वितरण आदि) को ठीक से चला नहीं पा रही हो और उसे एक लायबिलिटी या गले की फाँस समझ कर निजी हाथों में सौंपकर मुक्त होना चाहती हो तो अधिक अच्छा यही है कि वह इससे जल्द–से–जल्द मुक्त हो जाये ताकि अनिश्चितता और संक्रमण की त्रासदी से बचा जा सके और इस दिशा में नये प्रयोग की संभावनाओं को जल्द तलाशा व आज माया जा सके। कारण चाहे ठीक से न चला पाने की वजह से सरकार की विवशता हो या वैश्वीकरण हो अथवा दोनों हों किंतु सरकार का नियंत्रण और अनावश्यक हस्तक्षेप कम होने से शिक्षा जगत में स्वतंत्रता एवं स्वायत्तता का अवसर बढ़ेगा, जिससे शिक्षा में गुणवत्ता

के विकास की संभावना बढ़ेगी। हाल के वर्षों में निजीकरण को प्रोत्साहन दिये जाने से शिक्षा के क्षेत्र में प्रतिस्पर्धा बढ़ी है। भारत में आजादी के समय (बल्कि ब्रिटिशकाल) से बहुत कुछ सरकार के नियंत्रण में रहने के कारण शिक्षा में मोनोटोनस जड़ता आ गई थी। इसके अलावा यथास्थितिवाद के कारण शिक्षा में नवाचार और विविधता की गुंजाइश भी बहुत कम थी। किंतु शिक्षा में निजी एवं संयुक्त भागीदारी के बढ़ने के साथ शैक्षिक जड़ता समाप्त हुई है तथा विविधता एवं गति आई है।

सामान्यतया यह माना जाता है कि सरकारी नियंत्रण से मुक्ति विकास का मार्ग प्रशस्त करती है। जहाँ तक शिक्षा का सवाल है, स्वयं के नियंत्रण में होने पर सरकार निष्पक्ष रहकर गये। इन सुधारों के तहत जो उपाय अपनाये गये उनमें मुख्य रूप से तीन बातों पर जोर दिया गया। इनमें एक आर्थिक गतिविधियों विशेष रूप से वस्तु, पूँजी, सेवा एवं श्रम के प्रवाह से राज्य के नियंत्रण एवं हस्तक्षेप को कम या समाप्त करना, दूसरी निजीकरण को प्रोत्साहन देना और तीसरी, वैश्वीकरण (अर्थात् आर्थिक गतिविधियों को स्थानीय या राष्ट्रीय संदर्भ की जगह व्यापक वैश्विक संदर्भ में लिया जाना) को बढ़ावा दिया जाना था। आर्थिक क्षेत्र में लागू किये गये इन परिवर्तनों का देश की शिक्षा व्यवस्था पर भी व्यापक एवं दूरगामी प्रभाव पड़ा, जिनमें कुछ प्रभावों का उल्लेख आगे किया गया है।

इसमें कोई संदेह नहीं है कि विगत दो–ढाई दशकों में समाज का कोई गैर आर्थिक भाग अगर वैश्वीकरण के विश्वव्यापी तेज प्रवाह की चपेट में सबसे अधिक आया है तो वह शिक्षा ही है। यह स्वाभाविक भी है, क्योंकि शिक्षा के माध्यम से जैसा पूर्व में स्पष्ट किया गया है कि समाज और उसके भागों पर न केवल पकड़ बनाई जा सकती है बल्कि उसे मजबूत व स्थायी भी किया जा सकता है। शिक्षा के क्षेत्र में उदारवादी नीतियों को लागू करने से जो सबसे महत्वपूर्ण बदलाव देखने में आया है, वह यह है कि अभी तक शिक्षा सरकार का विषय हुआ करती थी जिसके चलते देश का नागरिक, सरकार से शिक्षा का प्रबंध किये जाने की अपेक्षा करता था लेकिन अब सरकार अपने इस दायित्व से हाथ खींच रही है। जिसके चलते उसकी कोशिश अब यह है कि शिक्षा आगे राज्य का विषय न रहे। यह अब राज्य की जगह बाजार का विषय बन जाये। ऐसा होने पर शैक्षिक संस्थाओं का

संचालन, वित्तीय एवं व्यावसायिक प्रबन्ध तथा गुणवत्ता में सुधार आदि विषय शनैः शनैः स्वतंत्र बाजार के नियम एवं खुली प्रतिस्पर्धा के आधार पर संचालित होने लगेंगे। इन मामलों में राज्य का हस्तक्षेप यदि पूरी तौर पर समाप्त नहीं हो जाता तो अत्यधिक सीमित अवश्य हो जायेगा, क्योंकि किन्हीं अपवादों छोड़कर विकास, चाहे आर्थिक हो या शैक्षिक, के मामले में नियंत्रित बाजार से बेहतर परिणाम की अपेक्षा नहीं की जा सकती है।

शिक्षा के क्षेत्र में दूसरा महत्त्वपूर्ण बदलाव निजीकरण को बढ़ावा दिया जाना है। जिसके तहत एक तरफ देश में निजी क्षेत्र में पब्लिक स्कूलों, कॉलेजों, तकनीकी संस्थानों एवं विश्वविद्यालयों की बाढ़ आ रही है और दूसरी तरफ सार्वजनिक क्षेत्रों में चल रही शिक्षण संस्थाओं में जनभागीदारी को बढ़ावा दिया जा रहा है। आर्थिक क्षेत्र में निजीकरण के ट्रेण्ड को देखते हुए कहा जा सकता है कि ऐसा करने के पीछे सरकार की कोशिश जनभागीदारी को बढ़ाते हुए भविष्य में इन संस्थाओं को निजी क्षेत्र में हस्तांतरित करना होगा।

वैश्वीकरण के चलते शिक्षा व्यवस्था में तीसरा महत्त्वपूर्ण बदलाव हमें शिक्षा के अधिकाधिक व्यावसायीकरण एवं बाजारीकरण के रूप में देखने को मिल रहा है। शिक्षा के क्षेत्र में आज उस डिग्री, योग्यता या ज्ञान का कोई महत्व नहीं है, जो व्यक्ति को रोजगार नहीं दिलाती है। यूँ तो शिक्षा में आर्थिक पक्ष का पहले भी महत्त्व होता था, क्योंकि ऐसा कहा जाता था कि 'अर्थ करिश्च विद्या'। इसी प्रकार जनसामान्य में प्रचलित यह कहावत कि 'पढ़ें फारसी बेचें तेल, ई देखो किस्मत का खेल' भी शिक्षा के व्यावसायिक पक्ष को उजागर करती है । किंतु पूर्व में शिक्षा का आर्थिक एवं व्यावसायिक पक्ष अधिक मुखर नहीं था, जबकि आज शिक्षा में अन्य चीजें गौण हो गई है और रोजगार प्रमुख हो गया है।

संप्रति, शिक्षा के क्षेत्र में एक महत्त्वपूर्ण बदलाव शिक्षा प्रणाली में सूचना प्रौद्योगिकी के विस्तार के रूप में देखा जा सकता है। वैसे शिक्षण व्यवसाय में क्लास रूम टीचिंग और टीचर का तो अभी भी महत्त्व है या किंतु हाल के वर्षों में शिक्षा पद्धति में आधुनिक तकनीकों का प्रयोग तेजी से बढ़ा है। ट्रांसपेरेंसी, ओवर हैड प्रोजेक्टरे, पावर प्वाइंट

प्रेजेंटेशन एवं मल्टीमीडिया के अन्य विविध साधनों के प्रयोग से क्लासरूम टीचिंग अधिक इफेक्टिव हुई है। विगत दो ढाई दशकों के दौरान क्लासरूम तकनीक से इतर शिक्षण तकनीन में सर्वाधिक उल्लेखनीय परिवर्तन देश में पत्राचार व दूरस्थ शिक्षा प्रणालियों की बढ़ती लोकप्रियता के रूप में देखने को मिला है। ये प्रणालियाँ शिक्षक पर कम, प्रिंट एवं इलेक्ट्रॉनिक मीडिया पर अधिक निर्भर करती हैं। आकाशवाणी एवं दूरदर्शन के माध्यम से शैक्षणिक कार्यक्रमों का प्रसारण, ऑडियो–विडियो कांफ्रेंसिंग तथा इंटरनेट एवं कंप्यूटर के उपयोग के चलते दूर–दूर तक फैले बहुत से लोगों तक बहुत कुछ एक समय पर और एक साथ ज्ञान एवं शिक्षा का प्रसार संभव हुआ है।

भारत में वैश्वीकरण ने जहाँ तक शिक्षा की परंपरात्मक तकनीकों, उपकरणों एवं शिक्षण विधा को विकसित पाश्चात्य समाजों में प्रयुक्त तकनीकों, उपकरणों एवं प्रणालियों से विस्थापित किया है या करने की प्रक्रिया में है, वह कोई आश्चर्य की बात नहीं है, क्योंकि उपयोगिता प्रधान होने से पूरी दुनिया में भौतिक संस्कृति के क्षेत्र में एक समाज से दूसरे समाज में उपकरणों, तकनीकों एवं प्रणालियों का आदान–प्रदान आसानी से हो जाता है। किंतु आश्चर्य तो इस बात का है कि वैश्वीकरण के चलते शिक्षा के माध्यम के रूप में स्थानीय भाषाएँ, यहाँ तक कि कमोबेश राष्ट्रव्यापी भाषा हिंदी भी, वैश्विक भाषा अंग्रेजी के द्वारा विस्थापित होने की प्रक्रिया में है। वह भी बावजूद इसके कुछ दशक पूर्व तक देश में इसके प्रयोग का विशेष रूप से हिंदी भाषाइयों द्वारा भारी विरोध किया जाता रहा। वैसे आज भी देश में ऐसे बहुत लोग हैं जो न केवल हिंदी को उसका वास्तविक हक दिलाये जाने की बात करते हैं य बल्कि शिक्षा के स्वदेशीकरण की पुरजोर वकालत भी करते हैं। किंतु चूँकि वैश्वीकरण के वर्तमान दौर में अंग्रेजी और कंप्यूटर का ज्ञान रखने वाले लोग विदेशों में खूब नाम और पैसा कमा रहे हैं, इसलिये उनकी ये बातें नक्कारखाने में तूती की आवाज जैसी बेअसर और गुम हो जाती हैं।

वैश्वीकरण के वर्तमान दौर में शिक्षा के क्षेत्र में एक अन्य किंतु महत्वपूर्ण परिवर्तन शिक्षा–संस्कृति विशेष रूप से शिक्षा के सामाजिक आचार तथा मूल्यों एवं अपेक्षाओं में देखने में आया है। संप्रति शिक्षा संस्कृति में परिवर्तन बहुत स्वाभाविक है, क्योंकि वैश्वीकरण

के चलते शिक्षा के प्रति परंपरात्मक सोच पूरी तौर पर बदल गई है। अब शिक्षा से 'असत से सत की ओर ले जाने की अपेक्षा नहीं की जाती। पुनः असत और सत के अर्थ भी अब वे नहीं हैं जो पहले थे। आज तो शक्ति, सत्ता और सफलता ही सत है और इनका अभाव इनमें से किसी के आधार पर बिना किसी भेदभाव के शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार होगा। किंतु इसके साथ अनुच्छेद 15(3) एवं 15(4) के माध्यम से संविधान में यह प्रावधान भी किया गया कि राज्य महिलाओं तथा अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों एवं अन्य पिछड़े वर्गों की उन्नति के लिए कोई विशेष उपबंध कर सकता है। इनके अतिरिक्त अनुच्छेद 46 के माध्यम से राज्य को निर्देशित किया गया कि वह दुर्बल वर्गों विशेष रूप से अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों के शैक्षिक हितों की अभिवृद्धि पर विशेष ध्यान देगा।

दरअसल, कोई समाज विकास के किस स्तर पर है। इसका पता अगर किसी एक उपादान के आधार पर लगाना हो तो यह कदाचित वहाँ के लोगों, विशेष रूप से महिलाओं के शिक्षा का स्तर ही हो सकता है। शिक्षा व्यक्ति व समाज के विकास की परिचायक ही नहीं होती, अपितु कारक व उत्प्रेरक भी होती है। किसी समाज में विकास के लिए आवश्यक प्राकृतिक संसाधन भले ही प्रचुर मात्रा में उपलब्ध हों किंतु उन संसाधनों का दोहन कर उन्हें विकासोपयोगी संसाधन में रूपांतरित करने का काम उर्पयुक्त मानव संसाधन के विकास के माध्यम से शिक्षा ही करती है।

आजादी के समय देश में विकास की क्या स्थिति थी, इसका अनुमान मात्र इस बात के आधार पर लगाया जा सकता है कि उस समय देश की अस्सी फीसदी से अधिक आबादी निरक्षरता की परिधि में थी। ऐसे में विकास की गति को तेज करने के लिहाज से लोगों में शिक्षा का विकास किया जाना जरूरी थौ। इसे तथा इस बाबत संविधान की मंशा को ध्यान में रखते हुए देश में शिक्षा को लोकव्यापी बनाने के उद्देश्य से गाँवों, कस्बों व शहरों में स्कूल, कॉलेज व विश्वविद्यालय खोले गये। औपचारिक शिक्षा को बढ़ावा दिया गया। पत्राचार एवं दूर–शिक्षा प्रणाली के माध्यम से दुर्गम व दूरदराज के इलाकों तक में उच्चतर माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा सुलभ कराई गई। कृषि, चिकित्सा, तकनीकी तथा

प्रबंधन एवं व्यावसायिक क्षेत्रों में शिक्षा की जरूरतों को ध्यान में रखते हुए विशिष्ट ज्ञान एवं विशेषज्ञता प्रदान करने वाली संस्थाओं को खोला गया। इन प्रयासों के फलस्वरूप शिक्षा के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति हुई। वर्ष 1950–51 में देश में करीब 2 लाख 21 हजार स्कूल, 700 कॉलेज तथा 20 विश्वविद्यालय थे, जो साढ़े पाँच दशक उपरांत 2006 तक बढ़ कर क्रमशः करीब 12 लाख, 20677 तथा 430 हो गये। वर्ष 1950–51 में देश में करीब 1 प्रतिशत लोग ही उच्च शिक्षा ग्रहण करते थे। विगत साढ़े पाँच दशकों में यह बढ़कर 10 प्रतिशत हो गया। इस प्रकार विगत साढ़े पाँच दशकों में उच्च शिक्षा में छात्रों के नामांकन में करीब 10 गुना वृद्धि हुई। जहाँ तक साक्षरता का प्रश्न है सन् 1951 में देश में केवल 18.33 प्रतिशत लोग ही साक्षर थे, जबकि 2001 में 64.84 प्रतिशत लोग साक्षर हो गये। इस प्रकार वर्ष 1951 से 2001 के बीच 50 वर्षों में देश में साक्षरता प्रतिशत में 46.51 प्रतिशत वृद्धि दर्ज हुई।

वैश्वीकरण : शिक्षा व्यवस्था में बदलाव

वैश्वीकरण और शिक्षा व्यवस्था के पारस्परिक संबंधों के बारे में हमने पूर्व में विचार किया और देखा कि वैश्वीकरण की बुनियाद आर्थिक उदारीकरण है। चूंकि उदारीकरण स्वतंत्रता पर आधारित होता है, अतः हम कह सकते हैं कि वैश्वीकरण का मूल तत्त्व स्वतंत्रता है, जो अर्थव्यवस्था में उदारीकरणजनित रूपांतरण के साथ समाज की अन्य उपव्यवस्थाओं में तद्जनित रूपांतरण को अभिप्रेरित करती है। आर्थिक उदारीकरण के पीछे जो केंद्रीय मान्यता काम करती है वह यह है कि राज्य अपनी प्रतिरोधात्मक प्रकृति एवं शक्ति के चलते लोगों की स्वतंत्रता को बाधित करता है, जिसकी वजह से वे अपना कार्य स्वाभाविक रूप से संपादित नहीं कर पाते हैं। परिणामस्वरूप, विकास प्रक्रिया अवरुद्ध होती है। इसके विपरीत स्वतंत्र बाजार चूँकि स्वचालित, स्वनियंत्रित व प्रतिस्पर्धी होता है, इसलिए इससे विकास की प्रक्रिया अवरोधित नहीं होती है।'

'उदारीकरण विकास को उत्प्रेरित करता है'– आर्थिक वैश्वीकरण के इस सूत्र का शिक्षा के क्षेत्र में विस्तार शिक्षा व्यवस्था में भी मौलिक परिवर्तन को अभिप्रेरित करता है।

इसमें मुख्य रूप से तीन बातें सहायक होती हैं। एक तो यह कि आर्थिक क्षेत्र में राज्य की सत्ता को विस्थापित करने के साथ बाजार की शक्तियाँ जीवन के अन्य क्षेत्रों जिनमें शिक्षा प्रमुख है, से भी राज्य के प्रभाव को समाप्त या शिथिल करने की कोशिश करती हैं ताकि आर्थिक क्षेत्र में बाजारवादी सुधारों को लागू करने में अन्य क्षेत्रों की ओर से किसी प्रकार की कोई कठिनाई पैदा किये जाने की कोई गुंजाइश नहीं रहे। दूसरी यह कि आर्थिक क्षेत्र में सुधारों को स्वाभाविक व स्थायी बनाने की दृष्टि से सामाजिक एवं सांस्कृतिक व्यवस्थाओं में इसके अनुकूल परिवर्तन लाना उपयोगी होता है, जो वैश्वीकरणोन्मुख शिक्षा प्रणाली के से मरलतापर्वक हासिल किया जा सकता है, क्योंकि शिक्षा सामाजिक–सांस्कृतिक परिवर्तन की एक सशक्त माध्यम होती है। तीसरी यह है कि शिक्षा व्यवस्था के राज्य की जगह स्वतंत्र बाजार के अधीन होने से लोगों की सोच और मानसिकता को आर्थिक सुधारों के अनुकूल ढालने में सहूलियत होती है, जिससे समाज में आर्थिक वैश्वीकरण की प्रक्रिया मजबूत व पक्की होती है।

यह एक सच्चाई है कि अस्सी के दशक के समाप्त होते होते भारत में अर्थव्यवस्था गंभीर संकट की स्थिति में पहुँच गई थी। इस स्थिति से निपटने के लिए देश की आर्थिक नीति एवं अर्थव्यवस्था में मौलिक परिवर्तन लाया जाना अपरिहार्य हो गया था। परिणामस्वरूप, नब्बे के दशक के शुरू होते–होते देश में आजादी के बाद से जो मिश्रित अर्थव्यवस्था की नीति अपनाई गई थी, जिसमें यद्यपि निजी क्षेत्र की अवहेलना तो नहीं की गई थी या किंतु समाजवाद की ओर झुकाब अधिक होने के कारण अर्थव्यवस्था पर सरकार का प्रभावी नियंत्रण था, कि परित्याग करते हुए उदारीकरण पर आधारित खुली अर्थव्यवस्था की नई आर्थिक नीति अपनाई गई। जिसके चलते देश में विश्व बैंक के दिशा–निर्देशों के तहत आर्थिक क्षेत्र में चरणबद्ध रूप से संरचनात्मक समंजन सुधार लागू किये महत्त्वपूर्ण होती है। तात्पर्य यह है कि शिक्षा और समाज का संबंध परस्पर लेन–देन का है।

शिक्षा में मुख्यतया दो बातें निहित होती है। जिनमें एक है ज्ञान का अर्जन। जिसके अंतर्गत तीन बातें सम्मिलित होती है। एक तो यह कि शिक्षा के माध्यम से हम ऐसा ज्ञान प्राप्त करते है जो हमें पहले से मालूम नहीं होता है और दूसरे, अगर हमें पहले से मालूम

होता है तो शिक्षा के माध्यम से उसमें वृद्धि होती है तथा तीसरे यह है कि अगर हमारा ज्ञान त्रुटिपूर्ण अथवा अशुद्ध है तो शिक्षा के द्वारा उसमें सुधार या परिमार्जन होता है। ज्ञान के अतिरिक्त शिक्षा में पायी जाने वाली दूसरी बात है। व्यक्ति के व्यवहार एवं कार्य करने के ढंग में परिमार्जन। अगर व्यक्ति को शिक्षा के माध्यम से उपर्युक्त दोनों में से किसी एक ही तत्त्व की प्राप्ति होती है तो शिक्षा अधूरी मानी जाती है। वास्तविक शिक्षा वही मानी जाती है, जिसके माध्यम से उपर्युक्त दोनों आदानों में व्यक्ति प्रगति करे। दूसरे शब्दों में, शिक्षा का आशय केवल यही नहीं है कि हम वह सब जाने जो शिक्षा प्राप्त करने के पहले नहीं जानते थे बल्कि यह भी है कि हम ऐसा व्यवहार भी करें जैसा कि शिक्षा प्राप्त करने के पहले नहीं करते थे। इस प्रकार शिक्षा न केवल व्यक्ति के अज्ञान को दूर कर उसका मानसिक एवं बौद्धिक विकार करती है या बल्कि उसे समाज एवं संस्कृति की रोलियों, परंपराओं एवं मूल्यों को अपनाने और उसके अनुसार अपने व्यवहार को परिमार्जित करने में भी मदद करती है। साथ ही, यह व्यक्ति को उसके सामाजिक दायित्व का भी बोध कराती है और उसे अपने दायित्वों के निर्वाह के योग्य भी बनाती है। संक्षेप में, शिक्षा व्यक्ति के व्यक्तित्व का विकास करती है और उसमें चरित्र का निर्माण भी करती है (सिंह, 2017, पृ. 129) गाँधी शिक्षा के व्यावहारिक पक्ष पर बहुत जोर देते थे, क्योंकि ज्ञान को आगर क्रिया में रूपांतरित नहीं किया जा सकता तो वह बौद्धिक विलास की एक वस्तु के रूप में पुस्तकालय की शोभा बढ़ाने के अलावा अन्य कोई मायने नहीं रखता है। इसलिए गाँधी यह मानते थे कि ऐसी शिक्षा का कोई मूल्य नहीं है, जो व्यक्ति में एक मजबूत चरित्र का निर्माण करने में विफल रहती है।

3.3 वैश्वीकरण के विभिन्न आयाम और सोपान

मनुष्य पौराणिक काल से ही भौगोलिक सीमाओं को लांघकर दूर तक चलने का प्रयास करते थे। यदि पिछले चार–पाँच सदियों को ध्यान में रखें तो हमें पता चलेगा कि वैश्वीकरण के तीन सोपान है–वे हैं उपनिवेशवाद, उपनिवेश से छुटकारा पाये, देशों की आर्थिक समस्या और उपनिवेशवाद का पुनर्जन्म।

उपनिवेशवाद

क्रिस्टाफर कालम्बस के पर्यटन से लेकर बीसवीं सदी के उत्तर्राध तक के काल में पाश्चात्य देशों ने तीसरे राष्ट्र कहे जानेवाले राष्ट्रों में विशेषकर एशिया, अफ्रिका, लैटिन अमेरिका आदि क्षेत्रों में अपना अधिकार जमाया था। इसका पहला कदम व्यापार था। इसमें प्रमुख थे हाथीदाँत, सोना, चाँदी आदि का व्यापार। सन् 1870 से सन् 1914 के बीच के इस जडमाने को उन्मुक्त बाजार कह सकते है। इस समय पूँजी और श्रम के आगमन पर कोई खास रोक नहीं था। कोई कहीं भी बस सकता था। बाजार के कारोबार में सरकारी दखलंदाजी नहीं के बराबर थी। प्रथम विश्व युध्द ने वैश्वीकरण के इस सिलसिले को बदल दिया। राष्ट्रीय क्रांतियों ने साम्राज्यों को पीछे धकेल दिया। राष्ट्रों की सरहदें पूँजी और श्रम के बेरोकटोक प्रवाह को यह परिस्थिति ने कठिन बनाया। द्वितीय युध्द से दुनिया दो हिस्सों में बैंट गयी।

आर्थिक स्वतंत्रता की समस्या

उपनिवेशवाद से छुटकारा पाकर सारे देश अपने पाँव पर खड़े होने के लिए परिश्रम करने लगे। भारत की पंचवर्षिय योजनाएँ इसके उदाहरण है। सन् 1873 के काल को पूँजीवाद का सुवर्ण युग माना जाता है। तेल समस्या, ऋण समस्या आदि के कारण तीसरे राष्ट्रों की आर्थिक स्वतंत्रता कुछ हद तक बिगड़ गयी। यहाँ से तीसरे पड़ाव का आरंभ होता है।

उपनिवेशवाद का पुनर्जन्म

आज का वैश्वीकरण उपनिवेशवाद का पुनर्जन्म है। यह खुला आक्रमण या औपचारिक राष्ट्रीय अधीनता के बिना कुछ अंतराष्ट्रीय संस्थाओं द्वारा सबके ऊपर अधिकार जमाने की वर्तमान स्थिति है। वैश्वीकरण के विचारों में उपनिवेशीकरण का भाव आया है। मानवीयता, भाईचारा आदि सारे भाव खोखले हो गये। हर एक वस्तु का मूल्य उपभोग पर

आधारित हो गया है। भारतीय समाज में उपनिवेशीकरण देश की स्वतंत्रता के साथ समाप्त नहीं हुआ। न केवल भारत में बल्कि समस्त देशों में नये ढंग से उपनिवेशीकरण की प्रक्रिया जारी हुई है। साम्राज्यवादी शक्तियाँ समस्त दुनिया को नयी कोलनी बनाने के लिए तत्पर थी। इसका विरोध भी स्वाभाविक जान पड़ता है।

कोई भी उपनिवेशीकरण के नाम पर आज दूसरे देश पर अधिकार नहीं जमाते। लेकिन इसके लिए अदृश्य औजार बनाते हैं। गाट और अन्य समझौते इसके हथियार है। नये उपनिवेशवाद की यह आदत ठीक रूप से समझना है। यदि इसके बारे में ठीक रूप से अवगत नहीं होगा तो इसके प्रतिक्रिया भी सफल नहीं होगा। कुछ लोग मानते हैं कि उदारीकरण और वैश्वीकरण हमारी आर्थिक दिक्कतों से छुचकारा दिला देंगे। "वैश्वीकरण राज्य की ताकतों के क्षय में परिणत हो गया है। देशों की आर्थिक अस्तित्व पहले का जैसा नहीं रह गया। अनेक देश जरूर संकट में है। हर देश को एक बदलती हुई दुनिया का सामना करना पड़ रहा है, जिसके कारण उसके ऊपर तरह–तरह के दबाव पड़ रहे है।"...4

वैश्वीकरण कल और आज

वैश्वीकरण नाम तो अब प्रचलित हुआ है। लेकिन पूँजीवाद के उदय से ही सभी पूँजीवाद संस्थाओं की सहत्वकांक्षा पूरे विश्व में अपना वर्चस्व फैलाने की रही है। औद्योगिक क्रांति से जब उत्पादन की मात्रा का तेजी से विस्तार हुआ तो अपने देश की सीमा से बाहर व्यापार फैलाने की जरूरत महसूस की जाने लगी। स्वतंत्र व्यापार के सिध्दांत की घोषणा अठारहवीं शताब्दी से होने लगी। सन् 1870 से सन् 1920 तक का समय विश्व समाज की बनावट का था। इसे वैश्वीकरण का प्रथम चरण मान सकते हैं।

भूमंडलीकरण की अवधारणा

भूमंडलीकरण के दो पक्ष हैं– आर्थिक और संस्कृति, किंतु ये दोनों कोई बिलकुल प्रथक दृ–पृथक संभाग (कंपार्टमेंट्स, वाटर टाइट कंपार्टमेंट्स) नहीं हैं, दोनों एक दूसरे से प्रभावित और संग्रथित हैं। वैश्विकरण के आर्थिक पक्ष से उपभोक्ततावाद या बाजारवाद

जुड़ा हुआ है। बाजारवाद सभ्यता के स्वरूप को आमूल दृ–चूल परिवर्तित कर सांस्कृतिक परिवर्तन की एक अदृश्य पीठिका प्रस्तुत करता है। भूमंडलीकरण की निसर्ग प्रक्रिया में श्रेयस्कर यह था कि विश्व के समस्त देश, उनकी संस्कृतियाँ, एक दूसरे को प्रभावित करते, एक–दूसरे को श्रेष्ठ ग्रहण करते। किंतु वास्तविकता यह है कि यह प्रक्रिया मात्र पश्चिमीकरण बनकर रह गई है और भी दो–टूक कहें तो वह पश्चिमीकरण भी नहीं है अपितु मात्र अमेरिकीकरण बनकर रह गया है।

अपने पूँजीवादी हथकंडों प्रशासनिक तंत्र से अमेरिका ने आज विश्व में इस प्रकार की स्थितियाँ उत्पन्न कर दी हैं कि उसकी इच्छा के बिना कोई भी राष्ट्र कोई महत्वपूर्ण निर्णय नहीं ले सकता। यदि कोई ऐसा दुस्साहसी पग उठाता है तो उसे ईराक बना दिया जाता है। अमेरिकी संस्कृति की दिग्विजय है यह!! भूंमडलीकरण के विषय में अमेरिकी विदेश मंत्री हेनरी किसींजर ने 1966 ई 'वाशिंगटन पोस्ट' सामाचार–पत्र के अपने एक लेख में कहा था कि कुछ ही समय में अमेरिकी संस्कृति और विकास मॉडल का वर्चस्व पूरे विश्व में फैल जाएगा। समय ने इसे सत्य कर दिखाया, आर्थिक–सांस्कृतिक उन्माद ने पूरे विश्व के आर्थिक और सांस्कृतिक भूगोल में एक ऐसी खलबली मचाकर रख दी है कि आज प्रत्येक विचारक, साहित्यकार, संस्कृतिकर्मि इस संकट और समस्या से अपने–अपने ढंग से जुड़ा है।

वस्तुतः भूमंडलीकरण मूलतः एक आर्थिक नियमन की व्यवस्था के रूप में अस्तित्व में आया किंतु इसके बाजारवादी पक्ष ने इसे सांस्कृतिक रूपांतरण की प्रक्रिया में डाल दिया। इस प्रकार अवधारणात्मक रूप में इसके दो पक्ष हैं– आर्थिक तथा सांस्कृतिक पक्ष। किंतु ऐसा नहीं है कि ये दोनों पृथक–पृथक संभाग हैं, ये एक दूसरे से अन्तर्ग्रथित हैं। उत्पादों के लिए बाजार की तलाश और उसके लिए विज्ञान के मायावी जगत द्वारा टी.वी. के पर्दे के उपयोग ने समस्त विकासशील देशों की संस्कृति को अमेरिकी संस्कृति में ढाल देने की सतत प्रक्रिया प्रारंभ कर दी। अतः वैश्विकरण के इन दोनों ही पक्षों पर विचार आवश्यक है।

राजनीतिक क्षेत्र में वैश्वीकरण

राजनीतिक क्षेत्र में वैश्वीकरण को एक ऐसी प्रक्रिया के रूप में देखा गया जहाँ राष्ट्रिय सीमाओं से आगे जाकर विभिन्न देशों में व्यापारिक संबंधों का नियमन किया जाता है। विभिन्न राष्ट्रों के बीच होनेवाले आर्थिक समझौते, व्यापार समझौते तथा विभिन्न देशों के व्यापारिक हितों का संरक्षण करनेवाले उनके संगठन (जी–7, सार्क, आदि) भूमंडलीकरण के राजनीतिक पग है। विभिन्न देशों के बीच होनेवाले अनेक सांस्कृतिक समझौते, शिष्ट मंडलों, आदि का आदान–प्रदान इस प्रक्रिया को और भी तीव्र गति प्रदान करते हैं। भूगोलशास्त्रियों, मैसे आदि ने स्पष्टतः घोषित किया कि भूमंडलीकरण किसी प्राकृतिक शक्ति के द्वारा सम्भव नहीं हुआ, अपितु यह एक राजनीतिक और आर्थिक विकास–प्रक्रिया के कारण सम्भव हुआ। जिसमें विश्व व्यापार संगठन, अन्तर्राष्टीय मुद्रा कोष, अमेरिका, बहुराष्टीय कंपनियों, विश्व बैंक, आदि ने और भी तीव्र गति दी। इस प्रकार अर्थशास्त्रियों, वाणिज्य प्रबंधकों, राजनीतिशास्त्रियों, भूगोल शास्त्रियों, संसारिक कर्मियों सभी ने स्वीकार है कि भूमंडलीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसमें पूरे विश्व की अर्थ–व्यवस्थाएँ व्यापक बाजार की तलाश में तकनीक और प्रोद्यौगिकी के उन्नत रथ पर चढ़ एक सी होती चली जाँए, जिनमें पूँजी की निर्बाध आवाजाही सम्भव होती रहे।

इसके नियमन के लिए अमेरिका ने ऐसी युक्तियाँ अपनाकर अन्तर्राष्टीय संस्थाओं, निकायों का ऐसा संजाल संगठित किया कि वह एक सर्वोच्च शक्ति और पूरी दुनिया के नियंता रूप में प्रमुखतम वित्तिय, सैन्य, और प्राध्योगिकीय ताकत के रूप में अमेरिका को इस समूची नई व्यवस्था का आकार देने की सहूलियत प्राप्त है, वैसी किसी औपनिवेशिक ताकत की कभी नहीं रही।'....5 अमेरिका किस प्रकार इस सारी व्यवस्था का नियंता बन गया है, उसको इस बात से समझा जा सकता है कि भूमंडलिकरण की ताकतों के विभिन्न घटक प्रमुख संस्थानों के मुख्यालय वाशिंगटन डी.सी. में केन्द्रित हैं जो अमेरिकी सरकार का भी मुख्यालय है– वाल स्ट्रीट, अन्तरराष्ट्रीय मुद्रा कोष, विश्व बैंक, विश्व व्यापार संगठन, संयुक्त राष्ट्र संघ, आदि। यही से पूरी दुनिया की अर्थव्यवस्थाओं का नियमन, होता

है। अमेरिका को भूमंडलीकरण को संभव बनाने वाली, अजेय शक्ति का रूप यहीं से प्राप्त होता है।

उन्नीसवी शती की शुरू में आर्थिक हितों की सुरक्षा और व्यापार बाजार की तलाश के हितों में भूमंडलीकरण की प्रक्रिया का प्रारंभ हुआ था। कुछ लोग भूमंडलीकरण की प्रक्रिया का प्रारम्भ 17 वीं शती के प्रारंभ से ही देखते हैं जब पुर्तगली, अंग्रेजी, डच तथा फ्रांसीस व्यापारिक कंपनियों ने अपने देशों से बाहर की सीमाओं में अपने व्यापार का प्रसार प्रारंभ कर दिया था। इनमें सर्वाधिक सफल ईस्ट इंडिया कंपनी रही जिसने व्यापारिक संस्था से राजनीतिक शक्ति का रूप ग्रहण कर अपने औपनिवेशिक विस्तार के मंसूबों को पूरा किया। एक प्रकार से यह पहली राष्ट्रीय–मल्टीनेशनल–कंपनी का रूप ग्रहण कर लेनेवाली संस्था थी। अपनी राष्ट्र–राज्य सीमाओं से बाहर बाजारों की तलाश की इस साम्राज्यवाद योजना ने ब्रिटिश राज को दुनिया की सर्वोच्च शक्ति के रूप में प्रतिष्ठित किया। कुछ विद्वान इस औपनिवेशिकरण की प्रक्रिया को और भी पीछे ले जाकर देखते हैं– '....बहुत प्रारंभिक समय से ही पूँजीवाद के तर्क में सफल विश्व–बाजार की ओर प्रस्थान निहित रहा है और ऐसा बाजार बनाने में औपनिवेशवाद ने मुख्य भूमिका निभाई है।

बहरहाल, पन्द्रहवीं शती से लेकर जब यह सब शुरू हुआ, अठारहवीं शती के अंत तक वास्तविक अपनिवेशवाद की प्रक्रिया मुख्यतया अमेरिकी महाद्वीपों में केन्द्रित रही और उन्नीसवी सदी में ही एशिया और अफ्रीका का बड़ी तीव्रता से औपनिवेशिकरण हुआ और दुनिया दो हिस्सों में बँट गई, जिसमें एक ओर विकसित पश्चिम के औद्योगिक देश थे और दूसरी ओर गैर–औद्योगिक उपनिवेशों और आश्रित राज्यों के विशाल पिछड़े इलाके थे।'....6 इसलिए भूमंडलीकरण के विकास के क्रमिक चरणों का संक्षिप्त सही आकलन समीचीन होगा।

3.4 भूमंडलीकरण के विकास का क्रमिक चरण

- आधुनिक भूमंडलीकरण का प्रथम चरण – 1850–1914 ई
- आधुनिक भूमंडलीकरण का दूसरा चरण – 1914–1950 ई
- आधुनिक भूमंडलीकरण का तीसरा चरण – 1951–1990 ई
- आधुनिक भूमंडलीकरण का चौथा चरण – 1990

आधुनिक भूमंडलीकरण का प्रथम चरण

प्रथम चरण प्रायः 1850–1914 ई., प्रथम विश्व दृ–युध्द तक के समय को माना जाता है। जिसमें मोहाविष्ट करनेवाली अर्थ– व्यवस्था आंग्ल दृ–अमेरिकी (एंग्लो दृ –अमेरिकन) नियंत्रण में पल्लवित होती है। इस समयावधि के प्रारंभ का यह वह समय था जब ब्रिटिश शक्ति का दुनिया के व्यापार और पूँजी बाजार पर अपने उपनिवेशी राष्ट्रों के माध्यम से एकछत्र साम्राज्य था और वहीं अपने कुछ विकसित औपनिवेशिक देशों के उपभोक्ताओं में अपने उत्पादों के लिए माँग बनाए रखती थी। किंतु अर्थ–व्यवस्था के भूमंडलीकरण की यह प्रक्रिया पहले बहुत धीमी रही, इसलिए प्रथम विश्व युध्द से पूर्व के समय में वैश्विक व्यापार–व्यवस्था में कोई महत्वपूर्ण तथा क्रांतिकारी परिवर्तन घटित नहीं हुए, ये परिवर्तन ऐसे अवश्य थे जिनसे अमेरिकी शक्ति, उसकी कूटनीतिक श्रेष्ठता तथा सशक्त अर्थ–व्यवस्था का वर्चस्व सहज रूप में बनता दिखाई दे रहा था।

बीसवीं शती में महायुध्द की घटना ने वैश्वीकरण की इस प्रक्रिया को बाधित कर इसकी गति को धीमा अवश्य कर दिया। बीसवीं शती का आगमन होते–होते अमेरिका ने ब्रिटिश शक्ति का स्थान लेना प्रारम्भ कर दिया था और उसके औपनिवेशिक व्यापार–प्रसार में प्रतिस्पध्र्दात्मक स्थिति उत्पन्न कर दी।....7 अमेरिका की तकनिकी उन्नति और अनेक नई खोजों ने भूमंडलीय बाजार में उसकी धाक जमानी शुरू कर दी। आवागमन, परिवहन, संचार के इन समुन्नत साधनों ने दुनिया के देशों के बीच की भौगोलिक दूरियों को समाप्त प्रायः कर भूमंडलीकरण की प्रक्रिया को तेज कर दिया।

अमेरिकी उत्पादों की अन्तरराष्ट्रीय बाजार में पहुँच भूमंडलीकरण की प्रक्रिया को और नई गति प्रदान कर दी। कुछ प्रसिध्द अमेरिकी ब्रांडों के उत्पादों ने इस समय अभूतपूर्व व्यापार किया। अमेरिकी कंपनियों को रेल–पथ, सड़क, पुल, आदि के निर्माणों के अनुबंध आदि स्थानों पर वहाँ मिलने लगे जहाँ अब तक ब्रिटिश कंपनियों का वर्चस्व था। वाणिज्यिक क्षेत्रों में संबंधों के बढ़ते सिलसिले ने सांस्कृतिक संबंधों की भी नींव डालकर वैश्विकरण के सांस्कृतिक पक्ष को प्रारंभिक विस्तार दिया। ग्रीडा–क्षेत्र में ओलम्पिक खेलों का आयोजन, सामाजिक–धार्मिक क्षेत्र में दूसरे राष्ट्रों में वैश्विकरण के सांस्कृतिक पक्ष की आधारशील रखी।

तेल उत्पादक एक बादशाह ने और आगे उसके पुत्र ने करोड़ों रूपए की राशी कितने ही लोकपकारी न्यासों को दान स्वरूप प्रदान की जिससे चिकित्सा, विज्ञान, स्वास्था–सेवाओं, शिक्षा दि में शोध तथा अन्तरराष्ट्रीय स्तर पर शोधकों के आदान–प्रदान कार्यक्रमों को चलाया जा सके। विज्ञान और चिकित्सा क्षेत्र में हुए अनेक जनकल्याणकारी कार्यों के अतिरिक्त अनेक अमेरिकियों ने मानव अधिकारों के संरक्षण के निमित्त 1906 ई. के आस–पास प्रभूत राशि उपलब्ध कराई। अनेक बैंकिंग, खनन तथा निर्यात से सम्बन्धित बड़ी कंपनियों ने प्रथम विश्वयुध्द से पूर्व अनेक आपदा–राहत कार्यों केलिए उदार दिए।

1906 ई. में न्यूयार्क मर्चोंट एसोशिएशन ने वालपेरेजो भूकंप पीड़ितों केलिए आठ हजार डॉलर की राशि जुटाई। इतनी ही राशि अमेरेका की गुगनेहीम संस, इब्लयू, आर ग्रेस एंड कंपनी, आदि ने इस कार्य केलिए मुहैया कराई। इस प्रकार 1914 ई. तक कितनी ही अमेरिकियों ने व्यक्तिगत स्तर पर और वहाँ की प्रसिध्द कंपनियों, फर्मों, आदि ने बहुत बड़ी राशि अपनी राष्ट्रीय सीमाओं से बाहर लोकोपकारी कार्यों केलिए मुक्त हस्त से दान की जिससे भूमंडलीकरण की प्रक्रिया इस प्रारम्भिक दौर में तेजी से जड़ पड़ी।

भूमंडलीकरण का दूसरा चरण(1914–1950)

भूमंडलीकरण का दूसरा चरण 1914–1950 ई. तक माना गया है। प्रथम विश्व–युध्द की समाप्ति से लेकर 1950 ई. तक प्रौद्योगिकी और तकनिकी विकास की गति यद्यपि पर्याप्त तीव्र रही किंतु फिर भी इस दौर में भूमंडलीकरण की प्रक्रिया कुछ धीमी रहे। अन्तरराष्ट्रीय स्तर जिसका मुख्य कारण व्यवस्था पनप रही थी, वह इस समय कुछ अंशों तक बाधित रही जिसका मुख्य कारण विभिन्न राष्ट्रों में पनपता शीत युध्द और 1920 ई. से प्रायः 1930 ई. तक चलती आर्थिक क्षेत्र की महामंदी थी, कुछ देश तो इससे 1939–40 ई. तक ही उबर पाए। प्रथम विश्वयुध्द के बाद अमेरिकी कंपनियों ने ब्रिटिश कंपनियों का दुनिया के पश्चिमी गोलार्ध्द और एशिया में वर्चस्व एक प्रकार से समाप्त ही कर दिया, अमेरिकी कंपनियों का व्यवसाय चारों ओर फैलने लगा। इसके साथ ही अन्तराष्ट्रीय स्तर पर अनेक सांस्कृतिक संस्थाओं की स्थापना हुई। जिससे स्वतंत्र ही वैश्विकरण की प्रक्रिया को शक्ति मिलती रही।

अनेक अमेरिका में शताधिक अंतरराष्ट्रीय गोष्ठियाँ, परिसंवाद, प्रशांत क्षेत्रीय संबंधों का अध्ययन, बहुराष्ट्रीय पत्रकार सम्मेलन आदि के रूप में न्यूयार्क में आयोजित हुए। गुगेनहीम न्याम नामक एक नए न्यास ने कितनी ही विशेषतः लेटिन अमेरिका से संबंधीत शोध परियोजनाओं का आर्थिक भार वहन किया। अंतरराष्ट्रीय शिक्षण संस्थान ने कितने ही विदेशी छात्रों की अमेरिका आकर अध्ययन करने केलिए धनराशि छात्र–व–छात्र के रूप में प्रदान की। इसी समय अमेरिकी रेडियो तथा फिल्मों ने अपनी राष्ट्रीय सीमाओं से बाहर पर्याप्त लोक प्रियता प्राप्त की। किंतु वैश्विकरण के इन सारे अपक्रमों की मार और द्वितीय विश्वयुध्द के प्रारंभ ने बाधित किया। किंतु अब तक अन्तरराष्ट्रिय समुदाय में महत्वपूर्ण शक्तियों को यह समझ में आने लगा था कि अन्तरराष्ट्रीय अर्थव्यवस्था पर ही शांति की आधारशीला रखी जा सकती है और 'यदि उत्पाद राष्ट्रों की सीमाओं को नहीं लाँघ सकते हैं तो सेनाओं का सीमाओं को लाँघना पड़ेगा, उनका अतिक्रमण करना होगा।' द्वितीय विश्वयुध्द के समय से ही अमेरिका को पुनः विश्व की अगुआई करने की ऐसी परिस्थितियाँ

प्राप्त होती चली गई कि वह अपने शांतिपूर्ण समृध्द और संगठित विश्व के स्वप्न को साकार कर सके। संसारिक उपयोग के लिए कंप्यूटर के आविष्कार और उसके निरंतर परिष्करण ने तो एक क्रांति ही उपस्थित कर दी। कंपयूटर की खोज सैन्य अभियानों को सफल बनाने के लिए प्रक्षेपक हथियारों की दूरी की परिगणना करने केलिए की गई थी। 1948 ई. तक आते–आते और उसका विशुध्द लाभ 356 लाख अमेरिकी डॉलर तक जा पहुँचा।

दो–दो विश्व युध्द की मार से डगमगाती अन्तरराष्ट्रीय अर्थ व्यवस्था को सुधारने के लिए या कहें अपने आर्थिक हितों की संरक्षणार्थ अमेरिका ने कुछ ऐसी संस्थाओं की स्थापना की जो वैश्विक अर्थ–व्यवस्था को नियन्त्रित करने में आज तक महत्वपूर्ण भूमिका अदा कर रही है। 1944 ई. में अमेरिका के ब्रेटनवुड्स नामक नगर में अपने मित्र राष्ट्रों का एक सम्मेलन उसने बुलाया। डॉलर की निर्भरता के ही कारण 21 वीं शती के प्रथम दशक के अंत से पहले, 2008 ई. में, पूरा विश्व आर्थिक मंदी के गहन अँधेरे में धकेल दिया गया और 1920–30ई. की मंदी से भी अधिक गंभीर आर्थिक संकट आज विश्व के सभी देशों के सामने खड़े हैं। इस विषय का विवेचन थोड़े बाद में चलकर किया जाएगा, किंतु यहाँ यह जानना ही समीचीन होगा कि किस प्रकार विश्व बैंक और अन्तरराष्ट्रीय मुद्रा कोष जैसी संस्थाओं ने भूंमडलीकरण की प्रक्रिया को तेज किया।

शीत युध्द के चलते अन्तरराष्ट्रीय विश्व समुदाय दो शक्ति केन्द्रों अमेरिका और रूस में बँटने लगा। कालांतर में देखा गया कि सोवियत संगठन, रूस का पूर्णतः विघटन हो गया। भूमंडलीकरण के अध्येताओं का मत है कि यदि सोवियत रूस का पतन न होता तो भूमंडलीकरण का स्वरूप कुछ भिन्न हुआ होता।

भूमंडलीकरण का तीसरा चरण(1951–1990)

भूमंडलीकरण का तीसरा चरण(1951–1990) तक माना जाता है। द्वितीय महायुध्द के पश्चात् अमेरिका में जाकर बसनेवाले प्रवासियों की संख्या में निरंतर वृध्दि होती चली

गई। 1956 में बीस लाख लोग अमेरिका आए और 1970 तक यह संख्या एक करोड़ जा पँहुची। इस प्रकार अमेरिका धीरे–धीरे सभी दृष्टि से केन्द्रीयता का स्थान ग्रहण कर रहा था। विश्व के अन्य देशों से भी अमेरिका के इन क्षेत्रों में सम्पूर्ण बढ़े जिससे पूरे विश्व को द्रुत और दूरगामी संचार व्यवस्थाओं, कंप्यूटर आदि के द्वारा बहुत निकट ला दिया गया और राष्ट्रों के बीच की भौगोलिक दूरियाँ बहुत बड़ी सीमा तक छोटी होती चली गई, दुनिया कंप्यूटर और मोबाइल पर चलती उँगलियों से नियंत्रित होने लगी। पर भर में एक देश से दूसरे देश में पूँजी का निवेश उँगली से बटन दबाने मात्र से होने लगा। इलैक्ट्रॉनिक मीडिया ने विश्व के राष्ट्रों को जिस चमत्कारिक रूप में एक दृ दूसरे के निकट ला दिया, उससे पूरा विश्व एक ग्राम (ग्लोबल विलेज) के रूप में दिखाई देने लगा। इस प्रकार कंप्यूटरकृत संचार तंत्र, संभार, ने वैश्विकरण की प्रक्रिया को बहुत द्रुत गति प्रदान कर दी।....8 ऐसे ही समय 1962 ई. में जनसंचार माध्यमों (मास मीजिया) के समाज पर प्रभावों का अध्ययन करते हुए मार्शल मैक्लुहन (Marshal Mcluhan) नामक कनडैयिन समाज–शास्त्री ने वैश्विकगाँव (ग्लोबल विलेज) की अवधारण को जन्म दिया। सूचना–क्रांति और मीडिया नए से नए करनीकी प्रयोगों–रेडियो, टेलिविजन आदि ने पूरे विश्व के राष्ट्रों को एकजातीय संस्कृति (होमोजेनस कल्चर) में ढालने का अभूतपूर्व प्रयत्न कर पूरी दुनिया को एक ही रंग में रँगने का सफल किया। वैश्विकरण की आर्थिकता ने सांस्कृतिक वैश्विकरण को संभव बनाया।

1973 से 1989 ई. तक भूमंडलीकरण का एक विशेष दौर कहा जा सकता है, जिसमें अमेरिका से बाहर पूँजी और व्यापार का उन्मुक्त प्रवाह तथा निवेश विभिन्न देशों में तीव्रता से हुआ। अनेक बहुराष्ट्रीय कंपनियों ने यूरोप के देशों, जपान, ब्राजील आदि में अपने व्यापार को प्रतिष्ठित कर अधिकाधिक मुनाफा प्राप्त करने के सफल प्रयत्न किए। वैश्विकरण की इस प्रक्रिया ने एक अन्तर्राष्ट्रीय सद्भावना को विकास मान करने की दिशा जिससे प्रेरित होकर विश्व से अग्रणी उद्योगपतियों ने कुछ ऐसे संघ बनाए जो अमेरिकी सरकार के राजनीतिक नियंत्रण से बाहर रहकर दूसरे देशों के राजनीति और व्यापारिक नेतृत्व को प्रभावित कर सकें। 1973 ई. में अमेरिका के कुछ उद्योगपतियों ने एक त्रिराष्ट्रीय

ऐसा आयोग बनाया जिसमें अमेरिका, पश्चिमी यूरोप तथा जपान के व्यापार, राजनीति, कानून तथा शिक्षा क्षेत्र के बुध्दिजीवियों प्रतिनिधित्व था। इसी प्रकार का सम्मेलन 1982 में देवोस स्विटजरलैंड मे हुआ जिसमें यूरोप के अग्रेणी उद्योगपतियों ने यूरोपीय आर्थिक जगत की समस्याओं पर विमर्श किया। अमेरिका के राजनीतिक नेतृत्व और प्रसिध्द अर्थशास्त्रियों ने जो नीतियों निर्धारित कीं उनमें अर्थनीतियों में उदारवाद एवं उन्मुक्त बाजार–व्यवस्था, खुले बाजार के नीति–निर्धारण पर बल दिया। परवरती अमेरिकी राष्ट्रपतियों ने भी वैश्विकरण के इस महत्व को स्वीकार करते हुए इस दिशा में अपने आगामी पग उठाए।

भूमंडलीकरण का चौथा चरण (1990 से)

1990 से अद्यतन भूमंडलीकरण का चौथा चरण कहा जा सकता है। जिसमें यह विश्चय ही एक आँधी की गति से दुनिया–भर में छाकर पैर जमा चुका है। यही वह समय है जब वैश्विकरण मात्र और मात्र अमेरिकीकरण बनकर रह गया है। यही वह समय है जब वाशिंगटन आम राय का क्रियान्वर प्रारंभ हुआ। अनेक राजनयिक वार्ताओं, सम्मेलनों के फलस्वरूप दिसम्बर 1992 में नाफ्टा समझौते (नार्थ अमेरिकन फ्री ट्रेड एग्रीमेंट) पर हस्ताक्षर करने केलिए अमेरिका, कनाडा और मैक्सिको के राष्ट्र–प्रमुख सेंट एंजिओ (टेक्सास) में एकत्रित हुए। अमेरिकी राष्ट्रपति जार्ज एच. डब्ल्यू. बुश ने अपने शासन काल की समाप्ति से पूर्व इसे अमेरिकी संसद से पास करवाना चाहा था किंतु यह सम्भव हुआ उत्तराधिकारी राष्ट्रपति बिल क्लिंटन के शासन काल में जब काफी बहस दृमुबाहिसे के बाद नवम्बर, 1993 में इसे अमेरिकी कांग्रेस की स्वीकृति मिली। जनवरी, 1995 में विश्व व्यापार संगठन (इब्लयू.टी.ओ. वलई ट्रेड ऑरगेनाइजेशन) अस्तित्व में आया। धीरे–धीरे इसे विश्व के अधिकांश राष्ट्रों ने स्वीकार कर लिया जो वर्तमान में समस्त राष्ट्रों के बीच नए व्यापारिक समझौतों, नियम–कानून बनाने और सभी प्रकार की व्यापारिक नीतियों के निर्धारण की व्यवस्था देखने संस्था है। 2001 ई. में दोहा सम्मेलन में इसके संविधान में कुछ संशोधन किए गए। जुलाई 2008 तक विश्व के 153 देश इसके सदस्य बन चुके हैं जिनके पूरे विश्व–व्यापार में 95 प्रतिशत तक की भागीदारी है।

इस सभी कार्यों ने अमेरिका को एक नए शक्ति केन्द्र, सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से विश्व के सर्वाधिक सशक्त राष्ट्र का रूप दे दिया तथा समस्त विश्व के अमेरिकीकरण की भूमंडलीय प्रक्रिया को और तीव्र कर दिया। इस प्रकार प्रथमतः और मुख्यतः भूमंडलीकरण का आधार आर्थिक है जिसके द्वारा विश्व के अधिकाधिक देशों की अर्थव्यवस्थाओं का नियमन अमेरिकी निर्देशों पर किया जा सके जिससे अमेरिकी वर्चस्व सर्वत्र सर्वप्रमुख रूप में बना रहे। इसलिए अन्तरराष्ट्रीय मुद्रा कोष (इंटरनेशल मोनेटरी फंड) ने भूमंडलीकरण को परिभाषित करते हुए कहा हा कि यह विश्व के विभिन्न देशों में एक–दूसरे पर बढ़ते आर्थिक निर्भरता तथा राष्ट्रीय सीमाओं से बाहर उत्पादों, पूँजी के अबाध आदान–प्रदान हैं।....9 पहली आर्थिक महामंदी भी अमेरिका से ही प्रारम्भ हुई थी और वर्तमान की वैश्विक मंदी भी अमेरिका से ही प्रारम्भ हुई।

जी–7 की बैठकें अपनी दो वर्ष की निर्धारित समयावधि से पूर्व ही 11 अप्रैल, 2008, फिर 10 अक्तूबर, 2008 को वाशिंगटन में और 14 फरवरी, 2009 को रोम में हुई। इसी प्रकार जी–20 की बैठक 14 मार्च 2009 को इंग्लैंड में हुई और 2 अप्रैल, 2009 को लंदन में हुई है। अमेरिका तथा विश्व के अन्य देश नित्य प्रति नए–नए उपाय सोच रहे हैं कि किस प्रकार विश्व को इस आर्थिक संकट से उबारा जाए। प्रायः समस्त विश्व के अर्थशास्त्री और कुछ देशों के राष्ट्र प्रमुख यह घोषित करते रहे हैं इस वैश्विक मंदी का और भी भयावह समय अभी आनेवाला है। अमेरिका, इंग्लैंड. फांस, स्पेन, जर्मन, जापान आदि देश अपने यहाँ के बैंकों तथा अन्य महत्वपूर्ण वित्तीय कंपनियों– ए.आई.जी. (अमेरिका) दृ आदि को विपूल राशि उनके व्यवसाय को धूरी पर लाने केलिए सहायतार्थ अनुदान आदि के रूप में दे रहे है।

भूमंडलीकृत आर्थिकता

भूमंडलीकृत आर्थिकता के अभावों पर चर्चा प्रारम्भ से ही रही, किन्तु इधर कुछ वर्षों में अर्थशास्त्रियों, समाजशास्त्रियों तथा संस्कृति के अध्येता निरंतर भूमंडलीकरण के कुप्रभावों का अध्ययन उनका मुख्य सरोकार बन गया है। वैश्विक आर्थिकता (इकॉनमी) का सबसे

अधिक दुखःद पक्ष जो पूरे विश्व के सामने आया है, वह है पूँजी, धन का असमान वितरण। समस्त देशों में पूँजी का संकेन्द्रीकरण उच्च वर्ग में अधिकाधिक होता चला जा रहा है और गरीब और अधिक गरीब होते चले जाने केलिए अभिशप्त हैं। पूरे विश्व को इसके भयावह परिणाम निरंतर भोगने पड़ रहे हैं। विभिन्न देशों की जनसंख्या में ही नहीं विश्व के समुन्नत राष्ट्रों और गरीब राष्ट्रों के बीच की खाई भी निरंतर बढ़ती चली जा रही है। इसकी मलाई के वे ही भागीदार रहे, अमेरिका को यह लाभ सर्वाधिक मिला।

कृषि क्षेत्र में बढ़ रही गरीबी का बयान देश के सर्वाधिक समृध्द पंजाब, वर्षों–वर्षों सूखे की मार झेलते विभिन्न क्षेत्र (महाराष्ट्र) और आन्ध्रप्रदेश के कर्ज की मार से बिलबिलाते किसानों की आत्म–हत्याएँ करती हैं। इन आत्म–हत्याओं का सिलसिला रूक नहीं पा रहा है, नित्य प्रति समाचार–पत्रों में इन राज्यों से आत्म–हत्याओं के समाचार प्रकाशित होते रहते है, जो यह सोचने पर विवश करते है कि शहरों में नित्य खुलते मॉल्स, बिग बाजार, रिलॉयंस, ईजी डे, आदि के हर शहर में खुलते स्टोर्स, उन्में विविध ब्रांडों के उपभोक्ता–उत्पाद, मैक्डोनल आदि की श्रृंखलाएँ हमारी अर्थ–व्यवस्था के किन विद्रूनों को संकेतित करते हैं। एक ओर अमीरों का वह वर्ग है जो अकूत सम्पत्ति का स्वामी है। 2007 की आर्थिक समृध्दि में भारतीय अरबपतियों की सम्मिलित आय 177 अरब डॉलर से बढ़कर 351 अरब डॉलर तक जा पँहुची। किंतु के सर्वाधिक दस धनपतियों की सूची में महान बिल गेट्स का स्थान प्रथम से फिसल कर तीसरा हो गया जबकी इस सूची में हमारी भागीदारी चौथे (लक्ष्मी मित्तल) पाँच (मुकेश अम्बानी), छठी (अनिल अम्बानी) तथा आठवें (के.पी.सिंह दृ–डी दृ–एल, एफ) स्थान को प्राप्त कर गई। देश की जनसंख्या के बीच बढ़ता यह आर्थिक असंतुलन सामाजिक अशांति और असंतीष का जनक होता है जिसके संकेत भारत और चीन जैसे बड़े देशों में मिलने प्रारम्भ हो गए हैं। भूमंडलीकरण प्रदत्त विकास के इस नए ढाँचे (मॉडल) ने जिस आर्थिक समृध्दि को सम्भव किया है, समाज के पिछड़े वर्ग तथा ग्रामीण क्षेत्र उससे 'कंगालीकरण' की और जाने केलिए अभिशप्त हैं।....10 कदाचित् आर्थिक विकास की कोई नई वैकल्पिक व्यवस्था, नया ढाँचा, तथा नव चिंतन समाज की इस अभिशाप से मुक्ति का मार्ग प्रशस्त कर सके।

भूमंडलीकरण : संस्कृतिक पक्ष

अमेरिका सर्वोच्च आर्थिक शक्ति ही नहीं बन गया अपितु अपने माल, उत्पादों को पूरी दुनिया में पहुँचाने केलिए भूमंडलीकरण स्थितियों, टैक्नालॉजी, प्रौद्योगिकी और संचार क्रांति ने उसे एख नव साम्राज्यवाद का शक्ति केन्द्र भी बना दिया। उसका या साम्राज्यवादी वर्चस्व केवल उपभोक्तावादी जीवन–दृष्टि और अमेरिकी सभ्यता के प्रसार तक ही सीमित होकर नहीं रह गया, उसने पूरे विश्व की संस्कृतियों को लीलने की प्रक्रिया बहुत तेजी से, बीसवीं शती के अन्तिम दो दशकों में विशेषतः प्रारम्भ कर दी। इसे कुछ लोगों ने सभ्यता और संस्कृति के अन्तरराष्ट्रीयकरण का नाम भी दिया। वस्तुतः पूरे विश्व के लोग जिस प्रकार एक दूसरे के सम्पर्क में है, इससे पूर्व ऐसा कभी भी मानव–इतिहास में सम्भव नहीं हुआ था। जितनी द्रुत गति से आज सूचना और पूँजी का प्रवाह पूरे विश्व में सम्भव हुआ है, उतना कभी भी नहीं हुआ था, जितनी सुविधापूर्वक और तीव्रता से माल और व्यक्तियों की आवाजाही इस जैट युग में बढ़ी है। वह अभूतपूर्व है।

3.4 वैश्वीकरण की विशेषताएँ

नये सूचना प्रसार एवं देश सीमाओं की समाप्ति

इक्कीसवीं सदी का समय आधुनिक तकनीकि का समय है। जीवन के सभी क्षेत्र में तकनीकि का किरण पहुँची है। विज्ञान एवं तकनीकि सारे देशों की भौगोलिक सीमाओं को मिटाने लगे है। अंतर्राष्ट्रीय भूमंडलीय पूँजी ने भी इसकी गीत को बढ़ाया। अंतर्राष्ट्रीय सहायता केन्द्र, मानव अधिकार आयोग International Amnesty विश्व बैंक World Bank तकनीकि प्रगति आदि से विश्व के विकसीत और विकासशील देशों का आपसी संबंध बढा। देशों के सामीहिक संगठन जैसे यूरोपीय राज्य संघ E-E-C- संयुक्त राष्ट्र संघ ओपेक आदि का हस्ताक्षर सुदृढ़ हुआ। न्यू ई–कोमर्स आजकल बहुत प्रचलित होता है। ई–कोसर्स आजकल बहुत प्रचलित होता है। ई–क्रेडिट कार्ड से कहीं से भी व्यापार या क्रय–विक्रय आसान हो गया।

सूचना और संचार

कंप्यूटर, इंटरनेट और संचार के अन्य आधुनिकता साधनों के जरिये दुनिया में राष्ट्रों के बीच की दूरी कम होती जा रही है। पहली नजर में इसका सकारात्मक गुण ही सामने आते हैं। लेकिन तीसरी दुनिया के लोग, जिनको खाना भी कल्पना की बात है उन्हें सूचना माध्यम से क्या फायदा?

ई–कामर्स

सूचना प्रसारण से तेज परिवर्तन ई–कोमर्स के क्षेत्र में हो रहे हैं। जिसमें उपभोक्ता अपने घर में बैठे ही व्यापार कर सकते हैं। कंप्यूटर से जुडी स्वचालित मशीनों के कारण आम लोगों के रोजगार का क्षेत्र सिमटता रहा।

इंटरनेट के आने से नये युग की शुरूआत व्यापार हो रही है। यह कहा जाने लगा है कि दुनिया एक गाँव (ग्लोबल विल्लेज) बन गई है। ग्लोबल विल्लेज की बात तो आर्थिक जगत में वैश्वीकरण के पूरक लगती है। जिस समाज में उपभोग का आकर्षण बहुत अधिक है, वहाँ असन्तोष भी बहुत गहरा है। औद्योगिक होड के कारण मानसिक तनाव बढ़ रहा है, अधिकांश लोग दिमागी बीमारी के शिकार होते है और इसके परिणाम स्वरूप खुदकुशी भी बढ रही है। इस माध्यमों का हाथ भी इसके विस्तार में है। आज हम जिसका उपभोग करते है, वह कल हमारा उपभोग कर लेगा। यह तो हमारे वैदिक दर्शन है। पहले से हम सुविधा के लिए संचार माध्यमों का इस्तेमाल किया। लेकिन आज उनका हम पर अधिकार आयी है। हम उनके पीछे फँस गयी है। सूचना प्रौद्योगिकी आदि हमें हिल रहा है।

3.5 निष्कर्ष

मूलपँजी की व्यवस्था आज संसार भर में व्याप्त है। एक देश से दूसरे देश तक मूलपँजी का बहाव अव बहुत तेज हो गया है। अब बर एक देश अपनी मूलपूँजी विदेश में डाल सकता है। मध्य एशिया की तेल कंपनियों को पेट्रोलियम बेचकर मिलनेवाले पेट्रो डोलर (Petro dollar) विदेश व्यापारों से यूरोप और अन्य देशों से मिलने वाले डोलर (Euro dollar) अफीम के व्यापार तथा अन्य रूप से मिलनेवाला काला धन आदि आज संसार की अर्थ व्यवस्थाओं की मूलपँजी है। इन सबसे विश्व में कहीं व्यापार करने का अवसर वैश्वीकरण से मिल रहा है।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. दि वाशिंगटन ऑफ दिस पेपर इज बोथ – पॉलिटिकल वाशिंगटन ऑफ कांग्रेस एंड सीनीअर मैम्बर्स ऑफ द, एडमिनिस्ट्रेशन एंड – टेक्नोक्रेटिक वाशिंगटन ऑफ द, इंटरवेशनल फाइनेशनल इंस्टीट्यूशंस, द अकॉनामिक एजेन्सीज ऑफ द, यू.एस. गवर्नमेंट, द शॉर्ट ग्लोबल गवर्नोन्स, शीर्षक शोध–पत्र से, बारसेलोना, 1.24–25 सितम्बर 2004.
2. सच्चिदानन्द सिन्हा, भूंमडलीकरण की चुनौतियाँ, भूमिका।
3. डां. मनमोहन सिंहा, 25, 2.फरवरी 2007 को नई दिल्ली में दिए गए भाषण से उद्घृत (दैनिक भास्कर फरवरी 2007)
4. टाइम – 29, 3.जून –6 जुलाई अंक – 1989 – ईयर दैट चेंज्ड द वर्ल्ड – लेख।
5. एजाज अङमद, सफर हाशमी स्मृति व्याख्यान, आलोचना (त्रैमासिक), अंक – छह, जुलाई – सितम्बर, 2001.
6. टाइम – 29, 4.जून – 6 जुलाई अंक – 1989 – ईयर दैट चेंज्ड – वर्ल्ड – लेख
7. एजाज अङमद, सफर हाशमी स्मृति व्याख्यान, आलोचना (त्रैमासिक), अंक – छह, जुलाई – सितम्बर, 2001.
8. मनमोहन सिंह, अक्षर पर्व मार्च 2004, 5.मृणाल पांडे द्वारा उद्घृत।
9. ग्लोबलाइजोशन इज द – "ग्रोइंग....." पापचमकपं.
10. सच्चीदानन्द सिन्हा, भूमंडलिकरण की चुनौतियाँ, पृ.सं : 24